मूल्य: ₹30 जुलाई–अगस्त 2021 आई. एस. ओ. 9001: 2015 संगठन

वैज्ञानिक बागवानी की लोकप्रिय पत्रिका

फल फूल

भाकृअनुप ICAR

www.icar.org.in

कटहल के प्रति ऐसा जुनून कि बसा दिया कटहल गांव

कटहल, दुनियाभर में मांसाहार का एक बेहतर विकल्प बन रहा है। शाकाहारी और वेगन लोगों की पहली पसंद कटहल भारत के साथ ही विदेशों में भी लोगों के खानपान का हिस्सा बन रहा है। देश के अलग-अलग हिस्सों में कटहल की खेती को लेकर जागरूकता बढ़ रही है। ऐसे में केरल के एक युवा किसान ने अपनी मेहतन और कटहल के प्रति अपने जुनून के कारण कटहल गांव बसा दिया है। केरल के त्रिशूर जिले के इरिंजालाकुडा के रहने वाले के.आर. जयन की कटहल के प्रति ऐसी दीवानगी है कि इन्होंने कटहल की 23 दुर्लभ प्रजातियों को विलुप्त होने से बचाया भी है। केरल में इन्हें 'प्लावु जयन' यानी कटहलमैन के नाम से भी जाना जाता है। कटहल को मलयालम में 'प्लावु' कहते हैं। पिछले दिनों केंद्रीय कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय ने इन्हें पुरस्कार देकर सम्मानित किया है।

के. आर. जयन कटहल को व्यवसाय नहीं, बल्कि मिशन मानते हैं। वह घर आने वालों को यह मुफ्त में देते हैं। जयन को इस बात की खुशी है कि उनके इस प्रयास को हरित क्रांति के जनक एम.एस. स्वामीनाथन से सराहना मिल चुकी है। यहां तक कि केरल के स्कूलों में आठवीं कक्षा के छात्रों को उनके द्वारा लिखी गई कटहल उत्पादन के अनुभव पर आधारित पुस्तक प्लवू की मूल बातें भी पढ़ाई जाती हैं। वर्ष 2018 में केरल सरकार ने कटहल को अपना 'राजकीय फल' घोषित किया था। पोषण से भरपूर कटहल को फल और सब्जी, दोनों रूप में उपयोग कर सकते हैं। इसके साथ ही इसे प्रसंस्करित करके इससे अलग-अलग उत्पाद भी बनाए जाते हैं। केरल में आपको हर एक घर में कटहल का पेड़ दिख जाएगा। लेकिन गुणों से भरपूर इस फल के प्रति जागरूकता की कमी के कारण इसकी बहुत-सी किस्में गायब हो चुकी हैं। ऐसे में इन खोई हुई किस्मों को फिर से उगाने और सहेजने को लेकर के.आर. जयन जागरूकता फैला रहे हैं। पिछले कई वर्षों से कटहल की प्रजातियों को सहेज रहे जयन के अनुसार वर्ष 1995 में वह नौकरी के लिए दुबई गए। दुबई में उन्हें किसी बात की कमी खली तो वह थी कटहल के पेड़। वर्ष 2006 में वह अपने वतन, अपने घर लौट आए और यहां आकर उन्होंने कटहल के पेड़ लगाने शुरू कर दिए। उनकी दिलचस्पी इस पेड़ में इस कदर थी कि उन्होंने इस पर शोध करना शुरू किया।

जयन बताते हैं कि कटहल की विभिन्न किस्मों की खोज में उन्होंने कई गांवों का दौरा किया और प्रत्येक गांव के कटहल के पेड़ों को समझने की कोशिश की। केरल के गांवों में आपको अलग-अलग किस्म के कटहल के पेड़ मिलेंगे। लोगों को इन किस्मों के नाम नहीं पता, उनके लिए तो कोई मोटा, कोई छोटा और कोई गोल कटहल है। लेकिन इस बात में दिलचस्पी किसी को नहीं कि अलग-अलग मृदा में कटहल की अलग-अलग किस्में होती हैं। ये सभी किस्में हमारी देसी और पारंपरिक किस्में हैं, जिन्हें सहेजना हमारी जिम्मेदारी है।

20 हजार से भी ज्यादा कटहल के पेड़ लगाए

जयन के मुताबिक उन्होंने अब तक 20 हजार से भी ज्यादा कटहल के पेड़ लगाए हैं। दिलचस्प बात यह है कि ये पेड़ एक ही किस्म के नहीं हैं, बल्कि 44 अलग-अलग किस्मों के हैं। इन किस्मों में, रुद्राक्षी, बलून वरिक्का, कशुमंगा चक्का, पदावालम वरिक्का, वाकथानाम वरिक्का, फुटबॉल वरिक्का जैसी किस्में शामिल हैं। जयन के अनुसार वह बडिंग या फिर ग्राफ्टिंग की बजाय, बीज पर आधारित खेती करने में विश्वास रखते हैं। वह पहले मिट्टी में बीज लगाते हैं और फिर इसकी पूरी देखभाल करते हैं। लगभग 5 वर्ष में कटहल का पेड़ फल देने लगता है और इसे किसी तरह की देखरेख की आवश्यकता नहीं होती। बीज से पेड़ बनने वाले कटहल की उम्र लगभग 150 वर्ष होती है, जबकि दूसरे तरीकों से लगाए गए कटहल के वृक्ष इतना नहीं जी पाते हैं।

भाकृअनुप
ICAR

फल फूल

वैज्ञानिक बागवानी की लोकप्रिय द्विमासिकी

वर्ष: 42, अंक: 4, जुलाई-अगस्त 2021

संपादन सलाहकार समिति

1. डा. अशोक कुमार सिंह — अध्यक्ष
   उप-महानिदेशक (कृषि विस्तार)
   भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली
2. डा. सतेन्द्र कुमार सिंह — सदस्य
   परियोजना निदेशक
   भाकृअनुप-कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय
   भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली
3. डा. आर.सी. गौतम — सदस्य
   पूर्व डीन
   भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली
4. डा. एस.के. सिंह — सदस्य
   निदेशक
   भाकृअनुप-राष्ट्रीय मृदा सर्वेक्षण एवं भूमि उपयोग नियोजन ब्यूरो, नागपुर
5. डा. वाई.पी.एस. डबास — सदस्य
   निदेशक (प्रसार)
   जी.बी. पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय पंतनगर
6. श्री सेठपाल सिंह — सदस्य
   प्रगतिशील किसान
7. श्री सुरेन्द्र प्रसाद सिंह — सदस्य
   कृषि पत्रकार
8. श्री अशोक सिंह — सदस्य सचिव
   प्रभारी, हिन्दी संपादकीय एकक

संपादक
अशोक सिंह
संपादन सहयोग
सुनीता अरोड़ा

प्रभारी (उत्पादन एकक)
पुनीत भसीन
मुख्य तकनीकी अधिकारी
अशोक शास्त्री

आवरण छायाचित्र
अशोक सिंह

प्रभारी (व्यवसाय एकक)
जे.पी. उपाध्ये
दूरभाष: 011-25843657
E-mail: bmicar@icar.org.in
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि अनुसंधान भवन, पूसा गेट, नई दिल्ली-12
एक प्रति: रु. 30.00 वार्षिक : रु. 300.00
E-mail : phalphul@gmail.com

डिस्क्लेमर

लेखों में व्यक्त विचारों, जानकारियों, आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं। उनसे भाकृअनुप की सहमति आवश्यक नहीं है। पत्रिका में प्रकाशित लेखों तथा अन्य सामग्री का कॉपीराइट अधिकार भाकृअनुप-डीकेएमए के पास सुरक्षित है। इन्हें पुन: प्रकाशित करने के लिए प्रकाशक की अनुमति अनिवार्य है। रसायनों-कीटनाशकों की डोज संबंधित संस्तुतियों का प्रयोग विशेषज्ञों से परामर्श के बाद करें।

विषय सूची

संपादकीय — **बागवानी क्लस्टर विकास कार्यक्रम का महत्व—अशोक सिंह**

आमदनी — 4
गुलाब की बहुपयोगी खेती
मनोज कुमार, सुनील कुमार **और** शिवांशु तिवारी

मुनाफा — 6
फालसा की खेती है लाभप्रद व्यवसाय
राकेश कुमार पाण्डेय, ओम प्रकाश अवस्थी **और** देवानी मुरुगन

कुछ अलग — 8
ब्लू ऑयस्टर मशरूम की खेती
आदित्य, आर.एस. जारियाल **और** कुमुद जारियाल

प्रसंस्करण — 10
पके आम की निर्जलीकृत फांकें एवं चूर्ण
विद्याराम सागर **और** राम रोशन शर्मा

महत्व — 11
केले में एकीकृत जल प्रबंधन
आकाश, दीक्षा मिश्रा, एम.के. सिंह, प्रतीक सिंह **और** साधना कुमारी

देखभाल — 14
आलू की अगेती फसल का प्रबंधन
बबिता चौधरी, सतीश कुमार लूथरा, विजय किशोर गुप्ता **और** मनोज कुमार

विशिष्ट — 17
प्रकृति की अनमोल देन वेटिवर की उन्नत खेती
चंदन कुमार, दीपक कुमार गुप्ता **और** धीरज सिंह

व्यावसायिक महत्व — 19
आंवले की वैज्ञानिक खेती एवं उपयोग
राजबाला मीणा, हरि सिंह मीना, हर लाल मीणा **और** दुर्गा शंकर मीणा

मसाला — 22
सौंफ की फसल से अर्थव्यवस्था में सुधार
दिलीप सिंह

रोकथाम — 25
बैंगन के प्रमुख रोगों की पहचान और नियंत्रण
कृष्ण कुमार, एस.के. पांडे, एस.के. सिंह **और** आर.के. दोहरे

विविध — 27
ऑयस्टर मशरूम से किसानों की आय वृद्धि
विजय अविनाशिलिंगम, एन.ए., छीतर मल ओला **और** प्रतिभा तिवारी

उपाय — 29
प्याज भंडारण की समस्या एवं समाधान
प्रेम नारायण

विषय-सूची

कृषि वानिकी 32
पॉपलर के साथ शिमला मिर्च की खेती
पूजा किशोर, समीर डेनियल **और** अनुकूल प्रकाश अनुराग

बगीचा 34
अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में बाग की स्थापना
राज कुमार, कनक लता, बी.एस. खद्दा, ए.के. राय **और** एस. खजुरिया

पोषक आहार 37
अरबी से स्वास्थ्य एवं खाद्य सुरक्षा
अर्चना करेल

लीक से हटकर 39
शरीफा की बागवानी है लाभकारी
निर्मल कुमार मीना, कल्पना चौधरी **और** विजय सिंह मीना

बचाव 42
टमाटर की फसल के प्रमुख कीट
अनुराग शर्मा, आरती शुक्ला, सीमा ठाकुर **और** रेणु कपूर

विधि 44
लौकी में 3 जी कटिंग से अधिक उपज
दीपक मौर्य, मेनिशा रानी, शिरिन अख्तर, तीर्थार्थ चट्टोपाध्याय **और** सर्वेश बरनवाल

नर्सरी
सब्जियों की पौधशाला का उचित प्रबंधन
जगदीश पाटीदार, बरखा शर्मा, आनन्द कुमार, रमेश सिंह, आशाराम, 46
लाल चन्द, नरेश कुमार, इन्द्रदेव **और** रमाकांत तिवारी

विधि 50
खरीफ प्याज उत्पादन तकनीक
रविन्द्र सिंह, सुमन कुमार **और** संजय कुमार

पोषण 52
सब्जियों के नियमित सेवन से बढ़ाएं प्रतिरोधकता
हरे कृष्ण, जगदीश सिंह, राजनाथ प्रसाद, राज बहादुर यादव **और** मनोज सिंह

वैज्ञानिक प्रणाली 54
मटर की उन्नत खेती
अरविन्द, ऋषिपाल कुमार **और** राजेन्द्र सिंह

सफलता गाथा
ढिंगरी मशरूम उत्पादन बना आय का स्रोत
ब्रज किशोर प्रजापति, एस.के. जाटव, आर.एल. राऊत, मुरलीधर इंगले, 58
सुखलाल वास्केल **और** जितेन्द्र मर्सकोले'

जानकारी 59
बागों में मानसून के कार्यकलाप
राम रोशन शर्मा **और** हरे कृष्ण

प्रेरणा स्रोत
कटहल के प्रति ऐसा जुनून कि बसा दिया कटहल गांव **आवरण II**

सार-समाचार
राष्ट्रीय नर्सरी पोर्टल का शुभारंभ **आवरण III**
विदेशियों को भा रहा जर्दालु आम

संपादकीय

बागवानी क्लस्टर विकास कार्यक्रम का महत्व

भारत में पाई जाने वाली जलवायु विविधता तथा प्राय: प्रत्येक प्रकार की मौसम परिस्थितियों की बदौलत लगभग सभी तरह के फलों एवं सब्जियों का देश में उत्पादन होता है। चीन के बाद फल-सब्जी उत्पादन में वैश्विक स्तर पर भारत का ही स्थान है। घरेलू बाजार में विक्रय के अलावा विभिन्न देशों को ये उत्पाद निर्यात कर बहुमूल्य विदेशी मुद्रा की कमाई भी की जा रही है। इसके बावजूद यह सच्चाई है कि वैश्विक बाजार में भारत की भागीदारी अभी काफी कम है। यही नहीं फलों एवं सब्जियों की नाशवान प्रकृति के कारण बड़ी मात्रा में ये उत्पाद खराब भी हो जाते हैं। अंतत: इसका खामियाजा किसानों को ही भुगताना पड़ता है।

इन्हीं सब चुनौतियों को ध्यान में रखते हुए केंद्रीय कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय द्वारा बागवानी क्षेत्र के विकास को सुनिश्चित करने के लिए बागवानी क्लस्टर विकास कार्यक्रम (सीडीपी) की हाल में शुरूआत की है। राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड के तत्वाधान में कार्यान्वित किए जाने वाले इस कार्यक्रम का बुनियादी उद्देश्य चुने गए बागवानी समूहों को वैश्विक स्तर पर प्रतिस्पर्धी बनाने के लिए विकसित करना है। इस कार्यक्रम के माध्यम से बागवानी क्षेत्र की समस्त समस्याओं के समाधान पर विशेष जोर दिया जाएगा, जिनमें पूर्व उत्पादन, कटाई के बाद प्रबंधन, भंडारण, विपणन आदि जैसे विषय शामिल हैं। प्रारंभिक स्तर पर कुल 53 बागवानी समूहों की पहचान की गई है, जिनमें से 12 को कार्यक्रम के पायलट प्रोजेक्ट के तौर पर फिलहाल चुना गया है।

देशव्यापी स्तर पर इस कार्यक्रम के कार्यान्वयन से उम्मीद है कि दस लाख से अधिक बागवानों और 'वैल्यू एडेड चेन' से सम्बद्ध स्टेकहोल्डर्स को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष लाभ पहुंचेगा। इतना ही नहीं इस कार्यक्रम के माध्यम से फलों एवं सब्जियों के निर्यात को 20 प्रतिशत तक बढ़ाने का भी लक्ष्य निर्धारित किया गया है। इन सभी 53 क्लस्टर में इस कार्यक्रम के लागू हो जाने के बाद संभावना जताई जा रही है कि 10 हजार करोड़ रुपये से अधिक का निवेश निजी एवं अन्य क्षेत्रों से मिल सकता है।

प्रायोगिक चरण में सेब उत्पादन हेतु शोपियां (जम्मू एवं कश्मीर) तथा किन्नौर (हिमाचल प्रदेश); आम के लिए लखनऊ (उत्तर प्रदेश), कच्छ (गुजरात) और महबूबनगर; केले के लिए अनंतपुर (आंध्र प्रदेश) और थेनी (तमिलनाडु); अंगूर हेतु नासिक (महाराष्ट्र); अनन्नास के लिए सिपाहीजला (त्रिपुरा); अनार के लिए सोलापुर (महाराष्ट्र) और चित्रदुर्ग (कर्नाटक) तथा हल्दी के लिए पश्चिम जयंतिया हिल्स क्षेत्र क्लस्टर बागवानी समूह में शामिल हैं।

ये क्लस्टर कार्यक्रम विभिन्न बागवानी फसलों की अधिक उपज ही नहीं सुनिश्चित करेंगे, बल्कि किसानों को उच्च पारिश्रमिक दिलवाने के लिए राष्ट्रीय एवं वैश्विक मूल्य शृंखलाओं से जोड़ने के लिए क्लस्टर विशिष्ट ब्रांड तैयार करने में भी आवश्यक सहायता प्रदान करेंगे।

(अशोक सिंह)

गुलाब की बहुपयोगी खेती

मनोज कुमार*, **सुनील कुमार**** और **शिवांशु तिवारी*****

पुष्प जगत में गुलाब का महत्वपूर्ण स्थान है। इसको फूलों का राजा भी कहा जाता है। गुलाब के पुष्पों की मांग, भारत सहित विश्वभर में 12-13 प्रतिशत वार्षिक दर से बढ़ रही है। इसकी खेती देश में खपत व विदेश में निर्यात करने के लिए, दोनों रूप में, महत्वपूर्ण है। गुलाब को कट फ्लावर, गुलाब जल, गुलाब तेल, गुलकंद आदि उत्पादों के लिए भी उगाया जाता है।

गुलाब के लिए बीच की जलवायु, अर्थात न अधिक ठंड एवं न अधिक गर्मी होनी चाहिए। दूसरे शब्दों में दिन का तपमान 25-30 डिग्री सेल्सियस तथा रात का 12-14 डिग्री सेल्सियस अति उत्तम माना जाता है।

खुले क्षेत्र में गुलाब उगाना

मृदाः गुलाब के लिए मृदा दोमट तथा अधिक कार्बनिक पदार्थ वाली होनी चाहिए, जिसका पी-एच मान 5.3 से 6.5 तक हो।

पौध तैयार करना

जंगली गुलाब के ऊपर 'टी' बडिंग द्वारा इसकी पौध तैयार होती है। इसकी कलम जून-जुलाई में क्यारियों में लगभग 15 सें.मी. की दूरी पर लगा दी जाती है और इनमें पत्तियां फूट जाती हैं। नवंबर-दिसंबर में चाकू की सहायता से फुटाव आई टहनियों पर से कांटे साफ कर दिये जाते हैं। जनवरी में अच्छी किस्म के गुलाब से टहनी लेकर 'टी' आकार कलिका निकालकर जंगली गुलाब के ऊपर लगाकर पॉलीथीन से कसकर बांध देते हैं। इस प्रकार जुलाई-अगस्त में रोपाई के लिए पौध तैयार हो जाती है।

*सह प्राध्यापक, कॉलेज ऑफ एग्रीकल्चर साइंस, टी.एम.यू., मुरादाबाद (उत्तर प्रदेश); **सह प्राध्यापक, आई.आई.ए.एस.टी., इंटीग्रल यूनिवर्सिटी, कुर्सी रोड, लखनऊ-226026 (उत्तर प्रदेश); ***एस.आर.एफ., गोबिन्द बल्लभ पन्त कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, पन्तनगर (उत्तराखंड)

प्रजातियां

- **संकरः** क्रिमसन ग्लोरी, मिस्टर लिंकन, लव, जॉन एफ. केनेडी, जवाहर, मृणालिनी, प्रेसीडेन्ट, राधा कृष्णन, फर्स्ट लव, अपोलो, पूसा सोनिया, गंगा टाटा सेटनरी, आर्किड, सुपर स्टार, अमेरिकन हेरिटेज आदि।
- **पाली एन्थाः** अन्जनी, रश्मि, नर्तकी, प्रीति, स्वाती।
- **फ्लोरीबन्डाः** बन्जारन, देहली प्रिंसेज, डिम्पल, चन्द्रमा, सदाबहार, सोनोरा, नीलाम्बरी, करिश्मा, सूर्य किरण आदि।
- **गैन्डी फ्लोराः** क्वीन एलिजाबेथ, मान्टे जुमा आदि।
- **मिनीपेचरः** ब्यूटी सीक्रेट, रेड फ्लश, पुश्कला, बेबी गोल्ड स्टार, सिल्वर टिप्स आदि।
- **लता गुलाबः** कॉकटेल, ब्लैक ब्वाय, लैमार्क, पिंक मैराडोन, मैरिकल नील आदि।

ले-आउट और तैयारी

सुन्दरता की दृष्टि से औपचारिक ले आउट करके क्यारियां तैयार की जा सकती है, जिनका आकार 5 × 2 मीटर रखा जा सकता है। क्यारियों को अप्रैल-मई में एक मीटर गहराई तक खोदें और 15-20 दिनों तक खुला छोड़ दें। क्यारियों में 30 सें.मी. तक सूखी पत्तियों को डालकर खोदी गई मिट्टी से इन्हें भर दें। इसके साथ ही गोबर की सड़ी खाद खेत (क्यारी) में डाल दें। इसके बाद क्यारियों को पानी से भर दें। दीमक से बचाव के लिए फॉलीडाल धूल या कार्बोफ्यूरॉन 3 जी. का प्रयोग करें। लगभग 10-15 दिनों बाद ओट आने पर इन्हीं क्यारियों में पंक्ति बनाते हुए पौधे से पौधे व पंक्ति से पंक्ति की दूरी 30 × 60 सें.मी. रखी जाती है।

पौध रोपाई

पौधशाला से सावधानीपूर्वक खोदकर

फूलों की कटाई के बाद देखरेख

फूल काटते समय पानी की बाल्टी साथ रखें, जिससे फूलों को कटने के तुरन्त बाद पानी में रखा जा सके। बाल्टी में कम से कम 10 सें.मी. पानी अवश्य होना चाहिए, ताकि फूलों की डंडी अच्छी तरह से भीग जाये। पानी के अंदर प्रिजर्वेटिव भी मिलाते हैं।

गुलाब का मनमोहक पुष्प

उत्तर भारत के मैदानी भागों में सितंबर-अक्टूबर में पौध की रोपाई करनी चाहिए। ध्यान दें कि कलिकायन वाला भाग रोपाई के समय भूमि की सतह से 15 सें.मी. ऊंचा रहे। पौधे से पौधे व पंक्ति से पंक्ति की दूरी 30 × 60 सें.मी. रखी जाती है। पौध लगाने के तुरन्त बाद सिंचाई कर दें।

सिंचाई

गुलाब के लिए सिंचाई का उत्तम प्रबंध होना चाहिए और आवश्यकतानुसार गर्मी में 5-7 दिनों बाद तथा सर्दी में 10-12 दिनों बाद सिंचाई करनी चाहिए।

कटाई-छंटाई (प्रूनिंग)

काट-छांट के लिए उत्तर प्रदेश के मैदानी भागों में अक्टूबर का दूसरा सप्ताह उपयुक्त होता है, बशर्ते काट-छांट के समय वर्षा न हो। पौधों में 3-5 मुख्य टहनियों को 30-45 सें.मी. लंबाई में काट दिया जाता है। इन्हें 45 अंश (डिग्री) पर आंख के 5 मि.मी. ऊपर से काटा जाता है, जिससे आंख खराब न हो पाये।

खाद एवं उर्वरक

गुलाब के विकास के लिए ठंड़ के दिनों में 3-4 घण्टे की धूप और रात्रि की ओस बहुत आवश्यक है। उत्तम कोटि का फूल लेने के लिए (प्रूनिंग के बाद) प्रति पौधा 10 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी खाद मृदा में मिलाकर सिंचाई करनी चाहिए। गोबर की खाद देने के एक सप्ताह बाद जब पौधों में नई कोंपलें फूटने लगें तब 200 ग्राम नीम की खली, 100 ग्राम हड्डी का चूरा तथा रासायनिक खाद का मिश्रण 50 ग्राम प्रति पौधा जिसमें यूरिया, सुपर फॉस्फेट तथा पोटेशियम सल्फेट 1:2:1 अनुपात में हो, देना चाहिए।

फूलों की कटाई

सफेद, लाल और गुलाबी रंग के फूलों में अधखुली पंखुड़ियों में जब ऊपरी पंखुड़ी नीचे की ओर मुड़ना शुरू हों, तब काटना ठीक रहता है। फूलों को काटते समय एक या दो पत्तियां टहनी पर छोड़ देनी चाहिए, जिससे पौधों को वहां से फिर बढ़वार मिलती है।

रोग एवं कीट नियंत्रण

- **पाउडरी मिल्ड्यू रोग (खर्रा):** इस फफूंदीजनित रोग में पत्तियों, तनों तथा कलियों पर सफेद चूर्ण फैला दिखाई देता है।

उपचार

- पौधों पर रोग की रोकथाम के लिए घुलनशील गंधक (2 ग्राम प्रति लीटर पानी में) या डाइनोकैप (1 मि.ली. प्रति लीटर पानी में) या ट्राइडेमार्फ (1 मि.ली. प्रति लीटर पानी में) का घोल बनाकर 15 दिनों के अंतर पर दो छिड़काव दवाओं को अदल-बदल कर करें।
- **डाईबैक या उल्टा सूखा रोग:** इस रोग का प्रकोप वर्षा के बाद से प्रारंभ होकर दिसंबर के अंत तक होता है। इसमें टहनियां ऊपर से शुरू होकर नीचे की ओर सूखना शुरू कर देती हैं तथा पौधे का तना काला पड़कर मर जाता है।

उपचार

- 50 प्रतिशत कॉपर ऑक्सीक्लोराइड का 3 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करें।

कीट

- **माहूं अथवा चैंपा (एफिड):** गुलाब में ये कीट छोटे, गोल, हरे, गहरे हरे या काले रंग के होते हैं। ये पौधे से रस चूसते रहते हैं। इनके प्रकोप से गुलाब की पत्तियां सिकुड़ जाती हैं एवं पौधा सूख जाता है।

उपचार

- कीट दिखाई देते ही तुरन्त डाईमिथोएट 1.5 मि.ली./लीटर पानी में अथवा मोनोक्रोटोफॉस 1 मि.ली./लीटर पानी में घोलकर 2-3 छिड़काव करें।
- **शल्क कीट:** इसका प्रकोप गुलाब के पौधे पर बहुतायत में होता है। ये लाल और भूरे रंग के शल्क कीट मुलायम तने का रस चूसकर उन्हें कुरूप बना देते हैं।

नियंत्रण

- फोरेट 10-जी 3-4 ग्राम या फॉलीडाल 2 प्रतिशत धूल की 10-15 ग्राम प्रति पौधे की दर से गुड़ाई करके मृदा में अच्छी तरह से मिला देनी चाहिए।

गुलाब की पत्तियों पर कीटों का प्रकोप

फालसा की खेती है लाभप्रद व्यवसाय

राकेश कुमार पाण्डेय*, **ओम प्रकाश अवस्थी*** और **देवानी मुरुगन***

फालसा (ग्रेविया एसियाटिका), भारत के शुष्क तथा अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में उगाया जाने वाला एक फलदार पौधा है। यह टीलिएसी कुल से संबंध रखता है। इसकी खेती देश में मुख्यत: पंजाब, उत्तर प्रदेश, हरियाणा और राजस्थान में की जाती है। फलों की शेल्फ लाइफ बहुत कम होने के कारण व्यावसायिक रूप से इसे बड़े शहरों के आसपास उगाया जाता है, ताकि फलों को कम समय में मंडी पहुंचाया जा सके। सहिष्णु तथा सूखारोधी होने के कारण फालसा अनुपजाऊ एवं लवणीय मृदा में भी आसानी से उगाया जा सकता है। इसका पौधा बौना एवं झाड़ीनुमा होता है। इसमें फलन जल्दी एवं नियमित रूप से होने के कारण इसको दूसरे फलों के बाग में पूरक फसल के रूप में भी उगाकर अतिरिक्त आमदनी प्राप्त की जा सकती है। फालसा के फलों का सेवन स्वास्थ्य की दृष्टि से अत्यंत लाभप्रद है। एंटीऑक्सीडेंट तथा अन्य पोषक तत्व जैसे-मैग्नीशियम, पोटेशियम, सोडियम, फॉस्फोरस, कैल्शियम, प्रोटीन, विटामिन 'ए' और विटामिन 'सी' आदि भरपूर मात्रा में होने के कारण यह शरीर की रोगप्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने में 'इम्युनिटी बूस्टर' का काम करता है, जिसका कि वर्तमान के कोरोना महामारी के समय में विशेष महत्व है। इसका सेवन गर्मियों में लू से बचाता है तथा फालसे का रस शरीर के लिए टॉनिक का काम करता है। इसके अलावा इसका फल पित्त की समस्या को दूर करने, पाचन तंत्र को मजबूत बनाने, रक्तचाप तथा कोलेस्ट्रॉल के स्तर को कंट्रोल करने, शरीर को कैंसर एवं एनीमिया जैसे रोगों से बचाने में भी काफी लाभप्रद होता है।

फालसे के फलों की पौष्टिकता एवं औषधीय गुणों के महत्व के कारण बाजार में इसकी काफी मांग होती है, परंतु आनुपातिक आपूर्ति नहीं हो पाती है। इसकी व्यावसायिक खेती पर उतना ज्यादा ध्यान नहीं दिया गया है। अत: उचित देखभाल एवं उन्नत विधियों से फालसे की खेती एक बहुत ही लाभप्रद व्यवसाय हो सकती है।

जलवायु एवं मृदा

यह गर्म एवं अधिक शुष्क मैदानी भाग तथा ज्यादा वर्षा वाले नम स्थान, दोनों ही प्रकार की जलवायु में सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। सर्दियों में सुषुप्तावस्था में होने के कारण यह पाले को सहन कर सकता है। इसका पौधा 3 से 45 डिग्री सेल्सियस तापमान पर बढ़ सकता है। फलों को पकने तथा उचित रंग एवं अच्छी गुणवत्ता के लिए पर्याप्त धूप एवं गर्म तापमान की आवश्यकता होती है। इसकी खेती सभी प्रकार की मृदाओं में की जा सकती है, परंतु अच्छी वृद्धि एवं उपज के लिए जीवांशयुक्त दोमट मृदा अच्छी होती है।

किस्में

सामान्य तौर पर फालसा की कोई मान्यता प्राप्त किस्म नहीं है लेकिन इसको दो प्रजातियों-क्रमश: बुआई तथा लंबी प्रजातियों के आधार पर विभाजित की गई हैं। बुआई किस्में लंबी किस्मों की तुलना में अधिक उत्पादकता वाली होती हैं। इनमें शुगर की मात्रा भी बुआई किस्मों की अपेक्षा ज्यादा होती है। फालसा की शर्बती किस्म काफी प्रसिद्ध है और व्यावसायिक रूप से उगाई जाती है।

प्रवर्धन

बीज द्वारा

फालसे को मुख्य रूप से बीज द्वारा प्रसारित किया जाता है। एक हैक्टर क्षेत्र के लिए लगभग एक-दो कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता होती है। बीज आमतौर पर जुलाई में बोया जाता है तथा बीजों का अंकुरण 15-20 दिनों में हो जाता है। खेत में 7-8 माह के पौधे लगाए जाते हैं। पौधरोपण के 15-18 माह बाद पौधे फल देने लगते हैं।

*फल एवं औद्यानिकी प्रौद्योगिकी संभाग, भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012

वानस्पतिक प्रवर्धन

व्यावसायिक रूप से फालसे का कलम द्वारा प्रवर्धन काफी प्रचलित है। कलम द्वारा विकसित पौधे एक जैसे तथा मातृ पौधे के समान होते हैं। आई.बी.ए. 200 पी.पी.एम. के प्रयोग से कलम द्वारा प्रवर्धन में सफलता की दर बढ़ाई जा सकती है।

पौधरोपण

फालसा में रोपण का उचित समय जुलाई-अगस्त का महीना होता है, हालांकि फरवरी-मार्च में भी रोपण किया जा सकता है। 6-8 माह के बीजीय पौधों को 60 × 60 × 60 सें.मी. आकार के गड्ढों में, प्रायः 2.5 × 3.0 मीटर तथा सघन पौधरोपण में 0.60 × 0.60 × 0.30 मीटर की दूरी (युगल पंक्ति रोपण प्रणाली) पर रोपित किया जाता है। इस विधि में पौधों की संख्या लगभग दोगुनी हो जाती है और उपज भी 25 प्रतिशत बढ़ जाती है।

पोषण प्रबंधन

फालसे को सामान्यतौर पर बहुत ज्यादा पोषण की आवश्यकता नहीं होती है। फिर भी अच्छी उपज के लिए प्रतिवर्ष क्रमशः 70:30:20 ग्राम एन.पी.के. एवं 15-20 कि.ग्रा. सड़ी गोबर की खाद प्रति पौधे की दर से फरवरी के दूसरे या तीसरे सप्ताह में देनी चाहिए। इसके अतिरिक्त सूक्ष्म पोषक तत्वों जैसे-जिंक सल्फेट एवं ऑयरन सल्फेट का 0.5 प्रतिशत की दर से फूल खिलने से पहले और फल ठहराव के समय छिड़काव करना चाहिए।

लाभकारी है फालसा की खेती

सिंचाई

फालसा एक सूखारोधी फसल है, किन्तु अच्छी पैदावार एवं उत्तम गुणवत्ता के लिए सिंचाई करना आवश्यक होता है। इसमें फरवरी के दूसरे या तीसरे सप्ताह में खाद व उर्वरक देकर पहली सिंचाई करनी चाहिए। इसके बाद मार्च से मई तक 15-20 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करते रहना चाहिए।

कटाई एवं छंटाई

फालसा फसल उत्पादन के लिए कटाई एवं छंटाई महत्वपूर्ण सस्य क्रियाएं हैं। फालसा में फल केवल नई शाखाओं पर गुच्छों में आते हैं। कटाई एवं छंटाई फालसा में प्रतिवर्ष की जाती है। इससे उपज अच्छी एवं फल उत्तम गुणवत्ता के साथ-साथ बड़े आकार के होते हैं। कटाई एवं छंटाई के लिए वांछनीय ऊंचाई मिट्टी की सतह से 0.8-1.2 मीटर रखी जाती है। कटाई-छंटाई का उत्तम समय 15 दिसंबर से 15 जनवरी के बीच का होता है। इस समय पौधे सुषुप्तावस्था में रहते हैं।

फलों की तुड़ाई, उपज एवं भंडारण

फालसा के फल अप्रैल के अंतिम सप्ताह से पकने शुरू हो जाते हैं। जून के प्रथम सप्ताह तक फलों की तुड़ाई होती रहती है। केवल पके हुए फलों को रोजाना तोड़ना चाहिए, क्योंकि कच्चे फल तुड़ाई के बाद नहीं पकते हैं। उन्नत ढंग से फालसा की खेती करने पर औसतन 6-10 कि.ग्रा. प्रति पौधा तक उपज प्राप्त की जा सकती है। पके हुए फलों का भंडारण सामान्य (कमरे के) तापमान पर एक या दो दिनों से ज्यादा नहीं किया जा सकता है, इसलिए तुड़ाई के तुरंत बाद इसकी बिक्री करना अत्यंत आवश्यक हो जाता है। इसका शीत भण्डारण 6-8 दिनों तक 5-7 डिग्री सेल्सियस तापमान पर किया जा सकता है।

निराई-गुड़ाई

खरपतवार को नियंत्रित करने एवं खाद तथा उर्वरकों को ठीक प्रकार से मिलाने के लिए कटाई-छंटाई के उपरांत एक से दो हल्की निराई-गुड़ाई करते हैं।

फूल एवं फलन

फालसा में फरवरी-मार्च में नई शाखाओं पर फूल आते हैं, जोकि मधुमक्खियों द्वारा परपरागित होकर फल बनाते हैं। फल अप्रैल-मई में पकते हैं। फलों का रंग पकने के समय लाल-गुलाबी, आकार 2.0-2.5 सें.मी. और स्वाद खट्टा-मीठा होता है। वृद्धि हार्मोन (इथरेल 1000 पी.पी.एम. तथा जिब्रेलिक एसिड 100 पी.पी.एम.) के प्रयोग से फालसा के फलों की गुणवत्ता एवं उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है।

फालसा के मूल्य संवर्धित उत्पाद

फालसा के फलों को एक या दो दिनों से ज्यादा सामान्य तापमान पर नहीं रखा जा सकता है अन्यथा ये फल खराब होने लगते हैं। इसलिए इसके फलों का उपयोग मूल्य संवर्धित उत्पाद जैसे-जूस, शर्बत, स्क्वैश तथा नेक्टर आदि बनाने में भी किया जाता है, जो इसके मूल्य को कई गुना बढ़ा देते हैं।

कीट एवं रोग

तनाछेदक इल्ली

इस कीट की इल्ली तना एवं शाखाओं में छेद करके अंदर से कैंबियम को खाती रहती है। इसके नियंत्रण के लिए छेद में केरोसीन का तेल या पेट्रोल इंजेक्शन डालकर रुई या गीली मिट्टी से बंद कर देना चाहिए। यह प्रक्रिया कटाई-छंटाई के तुरंत बाद दिसंबर-जनवरी में करनी चाहिए।

पत्ती का धब्बा रोग

बरसात के मौसम में इस रोग का अधिक प्रकोप होता है। यह कवकजनित रोग है, जिसके लक्षण पत्तियों के दोनों ओर छोटे काले धब्बे के रूप में दिखाई देते हैं। धीरे-धीरे पूरा पत्ता सफेद चूर्ण से ढक जाता है और पत्तियां गिर जाती हैं। इसके नियंत्रण के लिए डी.एम.-45 के 0.3 प्रतिशत घोल का छिड़काव करना चाहिए। ■

कुछ अलग

ब्लू ऑयस्टर मशरूम की खेती

आदित्य*, **आर. एस. जारियाल**** और **कुमुद जारियाल****

हाइपसीजियस अल्मसरियस को आमतौर पर 'एल्म ऑयस्टर' या 'ब्लू ऑयस्टर' कहा जाता है। यह सीप मशरूम के समान होता है, लेकिन रूपात्मक और जैविक दक्षता में भिन्न होता है। ब्लू ऑयस्टर मशरूम एक विशिष्ट प्रजाति है। इसमें बहुत बड़े फलने वाले अंग होते हैं और नीले रंग के पिनहेड्स परिपक्वता पर हल्के सफेद हो जाते हैं। ये स्वादिष्ट होने के साथ उच्च उपज वाले होते हैं। मशरूम की यह किस्म आकर्षक आकार और उत्कृष्ट स्वाद के साथ मांसल भी होती है। इसकी पैदावार, स्पोरोफोर आकार, स्वाद और बनावट अन्य व्यावसायिक सीप मशरूम की तुलना में कहीं अधिक बेहतर होता है जैसे कि प्लूरोटस फ्लोरिडा या प्लूरोटस साजोर-काजू। वर्तमान में इसे हिमाचल प्रदेश में उगाया जाता है। इसके अलावा इसकी बीजाणु सामग्री बहुत कम होती है। पौष्टिक रूप से इसमें 23.2 प्रतिशत कच्चा प्रोटीन, 56.1 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट, 1.9 प्रतिशत वसा और 9.1 प्रतिशत रेशा होता है। यह पेट और आंतों के रोगों के लिए अनुशंसित की जाती है।

सब्स्ट्रेट तैयारी (2-4 सें.मी. में सब्स्ट्रेट की काट)

सब्स्ट्रेट को गीला और स्टरलाइज्ड करना

अतिरिक्त पानी की निकासी

ब्लू ऑयस्टर मशरूम को छोटे और सीमांत किसानों द्वारा उगाया जा सकता है। इसे विभिन्न उपजाऊ माध्यमों अर्थात सोयाबीन, गेहूं, धान, मक्का के डंठल, अरहर, तिल, बाजरा, गन्ने की खोई, सरसों के पुआल, कागज के कचरे, कार्डबोर्ड, बुरादा और अन्य कृषि अपशिष्टों पर सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। सबसे पहले पुआल को छोटे टुकड़ों (2-4 सें.मी. लंबे) में काटा जाता है और उसके बाद उसे पानी में भिगोया जाता है, ताकि पुआल 75-90 प्रतिशत नमी के स्तर को प्राप्त कर ले। फिर फॉर्मेलीन (0.5 प्रतिशत) और कार्बेन्डाजिम (0.075 प्रतिशत) के घोल से उपचारित किया जाता है। 18 घंटे के बाद पुआल को बाहर निकाल दिया जाता है तथा सब्स्ट्रेट में से अतिरिक्त पानी को साफ तार की जाली पर रखकर निकाल दिया जाता है। सब्स्ट्रेट 18 × 12

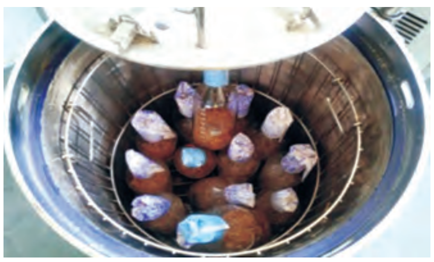

ऑटोक्लेव में अनाज सब्स्ट्रेट का स्टरलाइजेशन

यूवी स्टरलाइजेशन और कवक के साथ टीकाकरण

*स्नातकोत्तर छात्र (पादप रोग), **पादप रोग विज्ञान विभाग, डा. वाई.एस. परमार बागवानी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, बागवानी एवं वानिकी महाविद्यालय, नौड़ी (हमीरपुर), हिमाचल प्रदेश-177001

मास्टर स्पॉन

व्यावसायिक स्पॉन

स्पॉन मिश्रण

मायसेलियम का प्रसार

पिनिंग स्टेज

शुद्ध कल्चर

स्पॉनिंग विधि

बैगों में स्पॉनिंग (खुंबी का बीज मिलाना) दो तरीकों से की जा सकती है यानी बहुपरती या पूरी तरह से सब्स्ट्रेट में 5 प्रतिशत की दर से गीले भार के आधार पर मिलाया जाता है। बैग के ऊपरी किनारों को नायलॉन रस्सी की मदद से बांधा जाता है। वेंटिलेशन के लिए प्रत्येक बैग में एक मि.मी. के आठ से दस छेद किए जाते हैं। स्पॉन बैग (बीज फैले बैग) को मशरूम हाउस में रखा जाता है। औसत तापमान 20-30 डिग्री सेल्सियस, पी-एच 7.0-8.0 और सापेक्ष आर्द्रता 75-90 प्रतिशत इसकी मायसेलियम वृद्धि के लिए सामान्य व्यावसायिक खेती की शर्तों के तहत आवश्यक है। मशरूम मायसेलियम (स्पॉन रन) द्वारा सब्स्ट्रेट के पूर्ण उपनिवेशन के बाद पॉली-प्रोपलीन बैग हटा दिए जाते हैं। थैलों के खुलने तक पानी की आवश्यकता नहीं होती है। जब प्राइमरी गठन के समय थैलियों को खुला रखा जाता है, तो धुंध के रूप में बहुत हल्के पानी की व्यवस्था नियमित रूप से दी जाती है, ताकि वे नम रहें।

फलन अवस्था

या 20 × 16 या 24 × 16 इंच आकार के पॉली-प्रोपलीन बैग में भरा जाता है। ये क्रमशः 4, 7 और 9 कि.ग्रा. तक गीले पुआल को समायोजित कर सकते हैं।

बैग हटाने के 3-5 दिनों के बाद पिनहेड की शुरुआत होती है। मशरूम का पहला फ्लश इस्तेमाल किए गए सब्स्ट्रेट के प्रकार के आधार पर पिनहेड उपस्थिति के 5-7 दिनों के भीतर प्राप्त किया जाता है। मशरूम के किनारों को मुड़ने या नीचे की ओर मुड़ने से ठीक पहले परिपक्व स्पोरोफोर/फलों के पिंडों को तोड़ा जाता है। ये आमतौर पर गुच्छों में दिखाई देते हैं तथा इनकी तुड़ाई मामूली घुमाकर और खींचकर की जाती है। सब्स्ट्रेट के प्रकार और मौजूदा जलवायु परिस्थितियों के आधार पर 8-10 दिनों के अंतराल पर एक ही बैग से तीन से पांच लगातार फ्लश लिए जा सकते हैं। पहली तुड़ाई में बिजाई से 30-35 दिनों का समय लगता है।

औसतन 700-900 ग्राम ताजे मशरूम को एक कि.ग्रा. सब्स्ट्रेट के बैग से लिया जा सकता है, जिससे 70-90 प्रतिशत जैविक दक्षता प्राप्त होती है।

पके आम की निर्जलीकृत फांकें एवं चूर्ण

विद्याराम सागर* और राम रोशन शर्मा*

उत्कृष्ट स्वाद, खुशबू और पौष्टिक तत्वों के कारण आम भारत में उपभोक्ताओं का पसंदीदा फल है। इसमें खाद्य उद्योग को बढ़ावा देने, रोजगार के अवसर पैदा करने एवं किसानों के उत्पादों की अच्छी आमदनी हेतु मूल्यवर्द्धन व विविधीकरण की अपार क्षमता है। आम को या तो ताजा फल या प्रसंस्करित उत्पादों जैसे-अमचूर, स्क्वैश, अचार व पन्ना के रूप में उपयोग किया जाता है। सुरक्षा बलों के लिए खाद्य आपूर्ति हेतु पके आमों की स्लाइसों की चीनी के सीरप में डिब्बाबंदी के रूप में आपूर्ति की जाती है। इसमें डिब्बों की कीमत अधिक होने के कारण उत्पाद बहुत महंगा पड़ता है। इस संबंध में उत्पाद को सस्ता बनाने के लिए भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग, नई दिल्ली ने पके आमों की निर्जलीकृत स्लाइसों एवं चूर्ण को तैयार करने की तकनीक विकसित की है।

प्रौद्योगिकी की विशेषताएं

- पके आमों से निर्जलीकृत स्लाइसों को आसानी से तैयार किया जा सकता है, जिन्हें त्वरित उपयोग के लिए सीधे खाया जा सकता है।

आम की निर्जलीकृत फांकें

आम का चूर्ण

सारणी: आम की निर्जलीकृत फांकों का संघटन एवं पोषक मान

मापक	ताजा आम	निर्जलीकृत फांकें	आम का चूर्ण
नमी (प्रतिशत)	79.45	4.83	2.07
अम्लता (प्रतिशत)	0.88	0.64	0.47
न्यूनीय शर्करा (प्रतिशत)	5.54	20.65	18.61
कुल शर्करा (प्रतिशत)	13.78	66.50	66.02
एस्कॉर्बिक अम्ल (मि.ग्रा./100 ग्राम)	29.25	11.23	6.47
कुल केरोटिनॉयड (मि.ग्रा./100 ग्राम)	3.39	3.74	2.62
बीटा-केरोटीन (मि.ग्रा./100 ग्राम)	1.87	2.08	1.93

- पके आम की फांकें बहुत उपयोगी उत्पाद होती हैं, जिन्हें प्रत्येक आयु वर्ग के लोग पसंद करते हैं।
- यह उत्पाद विटामिन 'ए' व 'सी' से भरपूर होता है।
- इन्हें मैंगो शेक, मिक्स जूस, शर्बत, आइसक्रीम आदि तैयार करने में उपयोग में लाया जा सकता है।
- इस उत्पाद को तैयार करने के लिए उन आमों का भी प्रयोग कर सकते हैं, जो किसी कारण विपणन योग्य न हों।

प्रौद्योगिकी के लाभ

- तैयार किए गए उत्पाद को लंबे समय तक भंडारित किया जा सकता है।
- यह उत्पाद स्वादिष्ट पेय, स्वास्थ्यवर्धक व्यंजन एवं अन्य उत्पादों जैसे-मैंगो आइसक्रीम, मैंगो शेक, मैंगो टॉफी, मैंगो योगर्ट आदि तैयार करने के लिए प्रयोग किया जा सकता है।
- यह उत्पाद, आम का मूल स्वाद और सुगंध बनाए रखता है।

पके आम

- बेमौसम में, जब आम उपलब्ध न हों, उस समय यह उत्पाद आम का भरपूर स्वाद देता है।
- यह आइसक्रीम उद्योग में काफी सहायक होता है।
- आम के गूदा भंडारण के लिए आयी लागत की तुलना में ये उत्पाद काफी किफायती होते हैं

साभार: **भाकृअनुप-भाकृअनुसं, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित प्रसार साहित्य**

*खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग, भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012

केले में एकीकृत जल प्रबंधन

आकाश*, **दीक्षा मिश्रा****, **एम.के. सिंह***, **प्रतीक सिंह**** और **साधना कुमारी***

केला, मूल रूप से एक उष्णकटिबंधीय फसल है। इसकी जड़ें उथली होने के कारण, इससे अधिक उत्पादन लेने के लिए प्रचुर मात्रा में पानी की आवश्यकता होती है। इसे लगभग 1,800-2,000 मि.मी. पानी की आवश्यकता प्रतिवर्ष पड़ती है। सर्दियों में 7-8 दिनों के अंतराल पर, जबकि गर्मियों में इसे 4-5 दिनों के अंतराल पर सिंचित किया जाना चाहिए। कुल मिलाकर केले की फसल को लगभग 70-75 सिंचाइयों की आवश्यकता पड़ती है। हालांकि, बारिश के मौसम में भी आवश्यकता पड़ने पर पौधों की सिंचाई की जानी चाहिए। केले की उच्च सघनता बागवानी में प्रति इकाई क्षेत्र में पौधों की संख्या काफी अधिक होती है। यह जल तनाव के लिए अत्यधिक सहिष्णु फसल है, इस कारण इसमें जल प्रबंधन एक विशेष महत्व रखता है। जल तनाव की स्थिति के परिणामस्वरूप कम उत्पादन और खराब गुणवत्ता वाली फसल प्राप्त होती है। केले के अधिक उत्पादन के लिए मृदा में अनुकूल नमी बनाये रखने की आवश्यकता होती है, जो कि एकीकृत जल प्रबंधन को अपनाने से संभव है।

एकीकृत जल प्रबंधन से आशय है सिंचाई के लिए सिर्फ एक ही स्रोत पर निर्भर न होना। केले की वृद्धि और विकास के लिए जल जरूरी है, किन्तु लंबी अवधि व अधिक जलमांग होने के कारण इसके सम्पूर्ण जीवनकाल में उपयुक्त नमी स्तर को खेत में बनाये रखना एक बड़ी चुनौती है। केले की फसल को मृदा जल तनाव से बचाने के लिए केवल सिंचाई पर निर्भर नहीं रहा जा सकता है। आवश्यकता है एकीकृत जल प्रबंधन को अपनाने की, जिसमें सिंचाई विधि, फसल की अवस्था, जल संरक्षण, सुरक्षात्मक सिंचाई व जल गुणवत्ता आदि को ध्यान में रखते हुए खेत में उचित नमी बनाये रखी जाती है।

*सस्य विज्ञान विभाग; **उद्यान विज्ञान विभाग, कृषि विज्ञान संस्थान, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी-221005 (उत्तर प्रदेश)

एकीकृत जल प्रबंधन का उद्देश्य

एकीकृत जल प्रबंधन का मुख्य उद्देश्य फसल को जल तनाव से बचाना तथा मृदा में नमी को लंबे समय तक बनाये रखना है। इसके अंतर्गत निम्नलिखित बिंदु आते हैं:

सिंचाई विधि

मृदा की किस्म, ढाल आदि के आधार पर ऐसी सिंचाई विधि का चुनाव करें, जिसमें केले की फसल, जल का दक्षतापूर्ण उपयोग

टपक सिंचाई

टपक सिंचाई जैसी कुशल सिंचाई प्रणाली द्वारा केले की जल उपयोग क्षमता में सुधार लाया जा सकता है। इसके परिणामस्वरूप केले के गुच्छों का जल्दी विकास होता है। ये गुच्छे 30-45 दिनों पहले परिपक्व हो जाते हैं। टपक विधि से सिंचाई करने पर 58-60 प्रतिशत पानी की बचत होती है और उपज में 15-30 प्रतिशत की वृद्धि होती है। इसके अलावा, टपक प्रणाली के माध्यम से पानी में घुलनशील उर्वरकों का भी उपयोग किया जा सकता है।

टपक सिंचाई विधि से सिंचाई

कर सके। यदि सम्भव हो, तो टपक सिंचाई विधि का प्रयोग करना चाहिए। इससे अधिक उपज प्राप्ति व जल की बचत होती है।

केंद्र व विभिन्न राज्य सरकारों ने कृषकों की सुविधा के लिए टपक सिंचाई प्रणाली की स्थापना पर अनुदान देने की व्यवस्था (सारणी-2) की है। इसका लाभ किसान अपने जिले में स्थित कृषि विभाग से संपर्क कर प्राप्त कर सकते हैं।

फसल अवस्था व जल मांग

फसल को उसके विकास की किस अवस्था पर कितना जल चाहिए, इसका सम्पूर्ण ज्ञान कृषक को होना चाहिए, जिससे फसल को उसके जीवनकाल में कभी भी जल तनाव का सामना न करना पड़े। सारणी-3 में केले की विभिन्न विकास अवस्थाएं एवं उन अवस्थाओं पर प्रति पौधा जलमांग को दर्शाया गया है।

गहरी जुताई

बागान स्थापना से पूर्व खेत में वर्षा आरंभ होने से पहले मोल्ड बोर्ड हल से गहरी जुताई अवश्य करनी चाहिए। इससे मृदा द्वारा जल का अवशोषण बढ़ता है, भू-जलस्तर सुधरता है और खेत में नमी लंबे समय तक बनी रहती है।

सारणी 1. टपक व कूंड़ सिंचाई विधि का केले पर प्रभाव

विवरण	कूंड़ (फर्रो) सिंचाई	टपक सिंचाई	अंतर
1. पौधे की ऊंचाई (सें.मी.)	153.66	169.94	+16.28
2. पौधे की परिधि (सें.मी.)	60.39	71.28	+11
3. पत्तियों की औसत संख्या (प्रति पौधा)	34.11	35.29	+1.18
4. फूलों की औसत अवधि (दिन)	342	310	-32
5. कटाई की औसत अवधि (दिन)	433	397	-36
6. औसत वजन (कि.ग्रा.)	14	17	+3
7. उपज (टन/हैक्टर)	46.40	69.72	+23.32
8. प्रति हैक्टर उपज में वृद्धि (प्रतिशत)	-	46	-
9. पानी की बचत (प्रतिशत)	-	58-60	-

स्रोत: एमपीकेवी विस्तार प्रकाशन, महाराष्ट्र फुले कृषि विद्यापीठ, राहुरी, (महाराष्ट्र)

केले की जल क्रांतिक अवस्थाएं

जल क्रांतिक अवस्था फसल की ऐसी स्थिति होती है, जिसमें यदि फसल को जल न मिले तो उपज में सर्वाधिक गिरावट आती है। जब जल सीमित हो, तब केले में प्रारंभिक वानस्पतिक अवस्था, पुष्पनावस्था तथा फल बनने की अवस्था पर सिंचाई करना बहुत फायदेमंद होता है।

लवणयुक्त जल का उपयोग

सिंचाई के लिए लवणीय जल का प्रयोग करने से फसल व मृदा को क्षति पहुंचती है। ऐसे जल को अच्छी गुणवत्ता वाले पानी में मिलाकर पहले तनुकृत कर लें, इसके बाद सिंचाई के लिए उपयोग करें।

प्रक्षेत्र में केले की फसल

पलवार

भूमि पर बिछाई गयी सामग्री जैसे-फसल अवशेष, पॉलीथीन शीट आदि पलवार कहलाती हैं। ये भूमि की सतह से हो रहे वाष्पीकरण में प्रतिरोध पैदा करती हैं। वर्षा जल के अपवाह को रोककर अंत:स्पन्दन (जल को मृदा के अंदर पहुंचाना) में सहायता करती हैं। इससे जड़ क्षेत्र में नमी बनी रहती है।

केले की भरपूर उपज

सारणी 2. विभिन्न राज्यों द्वारा टपक सिंचाई पर दिया जाने वाला अनुदान

क्र. सं.	योजना का नाम	राज्य जिसके लिए लागू	पात्रता एवं सब्सिडी प्रतिशत
1.	प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना	सभी राज्य	लघु/सीमांत कृषक (55 प्रतिशत), अन्य कृषक (45 प्रतिशत)
2.	राज्य सूक्ष्म सिंचाई योजना	मध्य प्रदेश	80 प्रतिशत या अधिकतम 40000 रुपये
3.	'पर ड्रॉप मोर क्रॉप' सिंचाई योजना	उत्तर प्रदेश	लघु/सीमांत कृषक (90 प्रतिशत), अन्य कृषक (80 प्रतिशत) (पांच हैक्टर क्षेत्रफल के लिए)
4.	आंध्र प्रदेश सूक्ष्म सिंचाई परियोजना	आंध्र प्रदेश	अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के लघु/सीमांत कृषक (100 प्रतिशत या अधिकतम 2,00,000 रुपये) अन्य सभी लघु/सीमांत कृषक (90 प्रतिशत या अधिकतम 2,00,000 रुपये) मध्यम जोत कृषक (70 प्रतिशत या अधिकतम 2,80,000 रुपये) 10 एकड़ से अधिक जोत वाले कृषक (50 प्रतिशत या अधिकतम 4,00,000 रुपये)
5.	महा ठिबक सिंचन योजना	महाराष्ट्र	लघु और मध्यम कृषक (45-60 प्रतिशत) अन्य सभी कृषक (35-45 प्रतिशत)
6.	तेलंगाना सूक्ष्म सिंचाई परियोजना	तेलंगाना	सभी अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के कृषक (100 प्रतिशत) सभी पिछड़ी जाति के कृषक (90 प्रतिशत) अन्य सभी लघु व मध्यम कृषक (90 प्रतिशत) अन्य सभी जाति के किसान 80 प्रतिशत अनुदान के पात्र हैं। नोट: अधिकतम 12.5 एकड़ भूमि पर अनुदान देय

सरणी 3. केले की विभिन्न अवस्थाओं पर जल मांग

क्र.सं.	अवस्थाएं	अवधि (सप्ताह)	पानी की मात्रा (लीटर/पौधा)
1.	पौध रोपण के बाद	1-4	4-6
2.	किशोर अवस्था	5-9	8-10
3.	क्रांतिक विकास अवस्था	10-19	12
4.	कली विभेदन अवस्था	20-32	16-20
5.	शूटिंग अवस्था	33-37	20-23
6.	गुच्छ विकास अवस्था	38-50	24-28

सारणी 4. परंपरागत एवं उच्च सघनता बागवानी में अंतर

क्र.सं.	विवरण	परंपरागत बागवानी	उच्च सघनता बागवानी
1.	पेड़ों की संख्या	2500/हैक्टर	5200/हैक्टर
2.	उपज	कम (50-60 टन/हैक्टर)	ज्यादा (75-80 टन/हैक्टर)
3.	प्रबंधन	कठिन	काफी सरल
4.	श्रमिक की जरुरत	अधिक	कम
5.	उत्पादन लागत	ज्यादा	कम

सफलता की कहानी

श्री महेश जी, जिला तुमकुरु, गांव मकनहल्ली, कर्नाटक, केले की खेती पहले परंपरागत पद्धति से करते थे। इससे उनको औसत वार्षिक आय 1.47 लाख रुपये प्रति हैक्टर प्राप्त होती थी। कृषि विज्ञान केंद्र, हिरेहल्ली ने उन्हें केले की उच्च सघनता विधि (युग्मित पंक्ति) पर प्रशिक्षित किया। श्री महेश ने युग्मित पंक्ति विधि से 1.5×1.5×2.0 मीटर की दूरी पर पौधों का रोपण किया। इस उच्च सघनता बागवानी में वह 5200 पौधे/हैक्टर लगा पाए, जबकि पारंपरिक पद्धति में वह केवल 2500 पौधे ही प्रति हैक्टर लगा पाते थे। यद्यपि पारंपरिक बागवानी में केलों के गुच्छे का वजन (20.5 कि.ग्रा.), उच्च सघनता बागवानी की तुलना में थोड़ा अधिक होता है, लेकिन उत्पादकता केवल 578 क्विंटल/हैक्टर ही प्राप्त होती है। उच्च सघनता बागवानी में केले के गुच्छ का वजन 17.2 कि.ग्रा. होता है (परंपरागत बागवानी की तुलना में 3 कि.ग्रा. कम), लेकिन इस बागवानी से उत्पादकता 760 क्विंटल/हैक्टर (परंपरागत बागवानी की तुलना में 180 कि.ग्रा. से अधिक) तक प्राप्त होती है। इसका कारण है प्रति हैक्टर क्षेत्र में ज्यादा केले के पौधों का होना (लगभग दो गुना)। इस उच्च सघनता बागवानी से कृषक श्री महेश जी को 3.82 लाख रुपये/हैक्टर आय प्राप्त हुई तथा लाभ-लागत अनुपात 3.54 प्राप्त हुआ। इस प्रकार उन्हें पारंपरिक बागवानी की तुलना में उच्च सघनता बागवानी से 2.07 लाख रुपये की अतिरिक्त आय प्राप्त हुई।

खरपतवार नियंत्रण

खरपतवार द्वारा काफी मात्रा में नमी का उपयोग किया जाता है इसीलिए खेत को इनसे रहित रखना चाहिए। इसके लिए निवारक, यांत्रिक, रासायनिक आदि विधियों का उपयोग करना चाहिए।

वर्षा जल संग्रहण

बरसात का जो पानी अपवाह के कारण व्यर्थ हो जाता है, उसे नालियों, पाइपों, रूफ टॉप (छज्जे) आदि की सहायता से एक जगह संग्रहण कर सुरक्षात्मक सिंचाई के लिए रख लेना चाहिए।

आलू की अगेती फसल का प्रबंधन

बबिता चौधरी*, **सतीश कुमार लूथरा***, **विजय किशोर गुप्ता*** और **मनोज कुमार***

आलू, विश्व में चावल, गेहूं, मक्का के बाद उपयोग की जाने वाली चौथी प्रमुख खाद्य फसल है। यह फसल विश्व की बढ़ती जनसंख्या को कुपोषण एवं भुखमरी से निजात दिलाने में अहम भूमिका निभा सकती है। आलू, मानव के दैनिक आहार का एक अहम हिस्सा है तथा इसका इस्तेमाल मुख्य रूप से सब्जी के रूप में किया जाता है। आलू मुख्य रूप से स्टार्च, कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, खनिज लवण, फाइबर, विटामिन 'सी', विटामिन $बी_1$, एंटीऑक्सीडेंट और खनिजों का एक समृद्ध स्रोत है। आलू से कई प्रसंस्करित भोज्य उत्पाद तैयार किये जाते हैं, जैसे-चिप्स, पापड़, बड़ियां, दलिया, सूजी आदि।

आलू की खेती मैदानी क्षेत्रों में अक्टूबर से मार्च तक की जाती है। इसकी अगेती फसल की अवधि में उच्च तापमान के कारण उत्पादकता में कुछ कमी आ जाती है। नवंबर के मौसम में नये आलू की मांग के कारण, 60-70 दिनों में उगायी गयी फसल का किसान बाजार में अच्छा मूल्य प्राप्त कर सकते हैं।

आलू की अच्छी खेती के लिए उन्नत प्रजातियों का चुनाव अत्यधिक महत्वपूर्ण है।

*भाकृअनुप-केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र, मोदीपुरम, मेरठ-250110 (उत्तर प्रदेश)

कुफरी पुखराज

यह प्रजाति लगभग 70-80 दिनों में तैयार हो जाती है। इसमें शीघ्र कंद बनाने की क्षमता है एवं कंद जल्दी मोटा होता है तथा उत्पादन लगभग 250-300 क्विंटल/हैक्टर है। कुफरी पुखराज के कंद हल्के पीले, अंडाकार, आंखें मध्यम, सपाट व गूदा पीला होता है। यह प्रजाति पंजाब, हरियाणा व उत्तर प्रदेश में उगायी जा सकती है। कुफरी पुखराज पिछेता झुलसा के लिये मध्यम अवरोधी है।

शीघ्र पकने वाली किस्में लगभग 60-70 दिनों में तैयार हो जाती हैं। आलू की उन्नत प्रजातियां निम्न प्रकार हैं:

कुफरी सूर्या

अगेती फसल के लिये ऊष्मारोधी प्रजाति कुफरी सूर्या तैयार की गयी है। यह किस्म 70-80 दिनों की अवधि में लगभग 200-250 क्विंटल/हैक्टर तक उत्पादन दे सकती है। इसके कंद हल्के पीले, अंडाकार, आंखें सतही व गूदा हल्का पीला होता है। यह अगेती फसल में लगने वाले कीटों, लीफ हॉपर व माईट अवरोधी है। इस प्रजाति को मैदानी क्षेत्रों में अधिक तापमान में अगेती फसल

ट्रैक्टरचालित यंत्र से आलू की बुआई

के रूप में व भारत के पठारी क्षेत्रों में मुख्य फसल के रूप में उगाया जा सकता है।

कुफरी लीमा

अगेती फसल के लिये ऊष्मारोधी प्रजाति कुफरी लीमा का विकास किया गया है। यह किस्म 70-80 दिनों की अवधि में लगभग 200-250 क्विंटल/हैक्टर तक उत्पादन दे सकती है। इसका कंद सफेद, क्रीमी, अंडाकार, आंखे सतही व गूदा सफेद पीला होता है। यह अगेती फसल में लगने वाले कीटों, लीफ हॉपर व माईट की अवरोधी है। इस प्रजाति को मैदानी क्षेत्रों में अधिक तापमान में अगेती फसल के रूप में तथा भारत के पठारी क्षेत्रों में मुख्य फसल के रूप में उगाया जा सकता है।

कुफरी बहार

यह उत्तर प्रदेश में उगायी जाने वाली मुख्य प्रजाति है तथा 70 से 80 दिनों में तैयार हो जाती है। इस किस्म में शीघ्र कंद बनाने की क्षमता है तथा उत्पादन लगभग 250-300 क्विंटल/हैक्टर होता है। इस प्रजाति के कंद सफेद, अंडाकार-गोल, आंखें मध्यम व गूदा सफेद होता है।

कुफरी चन्द्रमुखी

यह प्रजाति 70-80 दिनों में तैयार हो जाती है तथा औसत उपज 200-250 क्विंटल/हैक्टर है। इसके कंद सफेद, अंडाकार, आंखें सपाट व गूदा सफेद होता है। कुफरी चंद्रमुखी के कंद देखने में आकर्षक व स्वाद में अच्छे होते हैं। इसको हरियाणा, पंजाब व उत्तर प्रदेश में अगेती फसल के रूप में उगाया जा सकता है।

कुफरी ख्याति

यह प्रजाति लगभग 70-80 दिनों में तैयार हो जाती है। इसमें आलू बनने की प्रक्रिया जल्दी शुरू होती है तथा उत्पादन लगभग 250-300 क्विंटल/हैक्टर है। इसके कंद मध्यम, सफेद-क्रीमी, अंडाकार, आंखें सतही मध्यम व गूदा क्रीमी होता है। यह उत्तरी मैदानी क्षेत्र में उगायी जा सकती है। यह प्रजाति पिछेता झुलसा के लिये मध्यम प्रतिरोधी है।

सफेद मक्खी

यह पीले रंग की एक अत्यंत ही छोटी, सफेद रंग के शल्कों से ढके पंख वाली पत्तियों से रस चूसने वाली मक्खी है। सफेद मक्खी मुख्य रूप से पत्तियों की निचली सतह पर पाई जाती है। यह आलू में एपिकल लीफ कर्ल नामक विषाणुजनित रोग फैलाती है। इसकी रोकथाम के लिये बीज को एमिडाक्लोप्रिड 70 डब्ल्यूएस की 5 ग्राम मात्रा 10 लीटर पानी में घोलकर उसमें अंकुरित कंद को 10 मिनट तक डुबोकर उपचारित करके बोना चाहिए। थायोमेथेक्साम 25 डब्ल्यूजी की 5 ग्राम मात्रा 10 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करने से यह मक्खी कम हो जाती है।

आलू में पुष्पन

कुफरी लवकार

यह 70-80 दिनों में तैयार होने वाली अगेती ऊष्मारोधी प्रजाति है। इसकी उपज 200-250 क्विंटल/हैक्टर है। इसके कंद सफेद, गोल, आंखें सपाट व गूदा सफेद होता है। इस प्रजाति को भारत के पठारी क्षेत्रों में अगेती फसल के रूप में उगाया जा सकता है।

जलवायु, मृदा एवं भूमि का चुनाव

आलू की खेती के लिए ठंडी जलवायु की आवश्यकता होती है। 25 से 35 डिग्री सेल्सियस दिन का तापमान आलू की वानस्पतिक वृद्धि और 15-18 डिग्री सेंटीग्रेड रात का तापमान उत्तम होता है।

आलू की खेती के लिए उपजाऊ मृदा का होना आवश्यक है। आलू की अच्छी उपज, शीघ्र परिपक्वता तथा सुरक्षित रहने की अवधि आदि गुण मृदा की उपयुक्तता की माप पर निर्भर करते हैं। मृदा का पी-एच मान 6.0-7.5 तक होना चाहिए एवं मृदा उपजाऊ, मध्यम आकार के कणों वाली, भुरभुरी व अधिक क्षारीय नहीं हो। आलू के लिए बलुई दोमट मृदा से हल्की दोमट मृदा सर्वोत्तम होती है।

खेत में आलू की फसल

खेत की तैयारी

आलू की खेती के लिए खेत को 3-4 बार गहरी जुताई करके मृदा भुरभुरी बाकी लेते हैं। खेत में पाटा लगाकर खेत को समतल करने के बाद खेत को बुआई के लिए तैयार कर लेते हैं। मृदा जितनी अधिक गहरी, खुली तथा भुरभुरी होगी उतनी ही वह आलू की फसल के लिए उपयुक्त होगी। उर्वरकों को खेत में अंतिम जुताई से पहले मिला देना चाहिए। बुआई के समय खेत में पर्याप्त नमी उपलब्ध होनी चाहिए।

बीज बुआई का समय एवं विधि

आलू बीज गुणवत्तायुक्त व अधिक उत्पादकता वाला हो। इसका भार 40-50 ग्राम बुआई के लिए सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। आलू की बीजाई के लिये लगभग 30-40 क्विंटल बीज/हैक्टर लगता है।

आलू की अगेती फसल की बुआई के लिए मध्य सितंबर से अक्टूबर के प्रथम सप्ताह तक का समय उपयुक्त है। बीज आकार के आलू कंदों को मेड़ों पर बोया जाता है। आलू बोने के लिए पंक्ति से पंक्ति की दूरी 60 सें.मी. तथा बीज से बीज की दूरी 20 सें.मी. हो एवं कंद को 3-4 इंच की गहराई पर बोना चाहिए।

उर्वरक एवं सिंचाई

पौधों की अच्छी वृद्धि के लिए 25-30 टन प्रति हैक्टर की दर से कम्पोस्ट की खाद प्रयोग करनी चाहिए। रासायनिक उर्वरकों में 180 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 80 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 100 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर की दर से प्रयोग करना चाहिए। उर्वरक की आधी मात्रा बुआई के समय व शेष मात्रा मिट्टी चढ़ाने के समय प्रयोग करनी चाहिए।

आलू की ढुलाई

आलू की अगेती फसल के लिए 4-5 सिंचाइयों की आवश्यकता होती है। यदि आलू की बुआई से पहले पलेवा नहीं किया गया है, तो बुआई के 2-3 दिनों के अंदर हल्की सिंचाई करनी अनिवार्य है। मेड़ों के बीच की नालियों में आधी नाली तक पानी देना चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण

आलू में खरपतवार नियंत्रण के लिए पैंडीमिथेलीन (33 मि.ली. प्रति 10 लीटर पानी) या मैट्रीब्यूजिन (7 ग्राम प्रति 10 लीटर पानी) का घोल बनाकर छिड़कना चाहिये। फसल बोने के 20-25 दिनों बाद खेत में खुरपे की सहायता या 'हो' के माध्यम से निराई एवं गुड़ाई करनी चाहिए।

फसल सुरक्षा

आलू की अगेती फसल पर कई रोग एवं कीटों का प्रकोप होता है, जो निम्न प्रकार हैं:

आलू खेत में काम करते हुए श्रमिक

लीफ हॉपर

इसके द्वारा रस चूसने के कारण पत्तियां किनारों से ऊपर की ओर मुड़ने लग जाती हैं एवं उनका आकार प्याले की तरह हो जाता है। इसे हॉपर बर्न के नाम से भी जाना जाता है। इसे रोकने के लिये इमीडाक्लोप्रिड की 3 मि.ली. मात्रा 10 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करते हैं।

माईट

यह कीट सिंचाई की कमी से अधिक पनपता है व अत्यधिक छोटा होने के कारण आंखों से दिखायी नहीं देता। इससे ग्रसित पौधों की पत्तियां अधिक हरे रंग की हो जाती हैं तथा पत्ती को उलटकर देखने पर तांबे के रंग की झलक दिखायी देती है। लक्षण दिखायी देते ही डाइकोफाल 2 मि.ली. प्रति लीटर का बुआई के 30-35 दिनों के अंदर फसल पर छिड़काव करें।

खुदाई एवं विपणन

खुदाई से दस दिनों पहले आलू की पत्तियों को काटकर, 10-15 दिनों बाद आलू की खुदाई करनी चाहिए। आलू की खुदाई खुरपी द्वारा या फिर ट्रैक्टरचालित हार्वेस्टर से करनी चाहिए। खुदाई के बाद आलुओं को छायादार स्थान पर रखना चाहिए एवं कटे-फटे आलुओं को अलग कर देना चाहिए।

अगेती फसल लगाने हेतु किसान अगेती प्रजातियों एवं गुणवत्ता वाले आलू बीज का चयन करें। किसी सरकारी संस्था से प्रमाणित बीज ही खरीदें। अंकुरित बीज लगायें, सिंचाई व कीट प्रबंधन का विशेष ध्यान रखें तथा समय से खुदाई करें। इन विशेष बातों को ध्यान में रखकर कृषक बंधु कम समय में आलू की अच्छी पैदावार लेकर अच्छा मुनाफा प्राप्त कर सकते हैं। ■

प्रकृति की अनमोल देन वेटिवर की उन्नत खेती

चंदन कुमार*, **दीपक कुमार गुप्ता**** और **धीरज सिंह***

वेटिवर (खस) की खेती मुख्य रूप आवश्यक तेल की निकासी के लिए की जाती है। इसकी जड़ से आय के साथ-साथ इसकी घनी जड़ प्रणाली के कारण, यह मृदा और जल संरक्षण दोनों में उपयोगी है। वेटिवर रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों में विषाक्त पदार्थ को अवशोषित करता है और मृदा की भौतिक दशा में सुधार करता है। यह पौधा मृदा कटाव को रोकने में अच्छा मददगार होता है। इसलिए मृदा के बाइंडर के रूप में इसका उपयोग उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में अब ज्यादा होने लगा है।

वेटिवर (वेटिवेरिया जिजानोइडेस) उत्तर और पश्चिम भारत में खस के नाम से जाना जाता है। यह पोएसी परिवार की, एक बारहमासी घास है। वेटिवर भारत के उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में उगाया जाता है। यह एक प्रमुख औद्योगिक घास फसल है और इसका उपयोग बड़े पैमाने पर दुनियाभर में आवश्यक तेल एवं स्वाद और सुगंध उत्पाद बनाने वाले उद्योग में किया जाता है। वेटिवर का उपयोग जैविक खाद के उत्पादन में भी किया जाता है। इसकी जड़ प्रणाली काफी बारीक, संरचित एवं बहुत मजबूत होती है। अधिकांश घासों में जड़ प्रणाली क्षैतिज रूप से और चटाई जैसी फैलती है, इसके विपरीत, वेटिवर की जड़ें रेशेदार और जमीन के नीचे 2-4 मीटर गहराई में मजबूती के साथ नीचे बढ़ती हैं। इसकी जड़ों से निकलने वाले सुगंधित आवश्यक तेल में मुख्य रासायनिक घटक बेंजोइक एसिड, वीटिवरोल, फुरफुरोल, वैटिवोन और वैटिवीन हैं। अपने उत्कृष्ट सुधारक गुण के कारण यह व्यापक रूप से इत्र के व्यवसाय में उपयोग किया जाता है। वेटिवर की सूखी जड़ों का उपयोग चटाई, पंखे, स्क्रीन, तकिए, बास्केट, सुगंधित अगरबत्ती और पाउच बैग बनाने के लिए भी किया जाता है।

वेटिवर की किस्में

भारत में, 'दक्षिण' और 'उत्तर' भारतीय नाम की दो प्रकार की वेटिवर किस्मों की आमतौर पर खेती की जाती है। उत्तर भारतीय प्रकार की वेटिवर की पैदावार बेहतर और इसमें गुणवत्तायुक्त तेल होता है, लेकिन इसकी जड़ें नम मैदान में ज्यादा गहराई में नहीं जाती हैं। दक्षिण भारतीय प्रकार के वेटिवर का प्रयोग मुख्यत: व्यवस्थित खेती के लिये होता है। इसके तने मोटे, कम शाखाओं वाली जड़ें, चौड़ी पत्तियां एवं बिना बीज वाला पौधा होता है। दक्षिण भारतीय प्रकार में, पूसा हाइब्रिड-7, हाइब्रिड-8, सीमैप के एस-2, सुगंधा, के एच-8, के एच-40 और ओडी भी-3 किस्में व्यावसायिक खेती के लिए उपलब्ध हैं।

लाभकारी वेटिवर की खेती

प्रमुख उत्पादन क्षेत्र

वेटिवर, भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका और मलेशिया के लिए स्वदेशी पौधा है। भारत में यह फसल व्यवस्थित रूप में राजस्थान, उत्तर प्रदेश, केरल, कर्नाटक, मध्य

*भाकृअनुप-काजरी, कृषि विज्ञान केंद्र, पॉली-मारवाड़-306401 (राजस्थान); **भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, गौरीया कर्मा, बरही, हजारीबाग-825405 (झारखंड)

प्रदेश और आंध्र प्रदेश राज्यों में उगाई जाती है। देश में लगभग 20-25 टन वेटिवर तेल का उत्पादन किया जाता है। इसमें उत्तर प्रदेश इसके तेल का सबसे अधिक मात्रा में उत्पादन करता है, जो कि मुख्यत: जंगली स्रोत के माध्यम से लिया जाता है। उत्तर भारत में उत्पादित वेटिवर तेल की गुणवत्ता उच्चतम श्रेणी की होती है और अंतर्राष्ट्रीय बाजार में इसकी बहुत अधिक कीमत मिलती है।

मृदा

वेटिवर को लगभग सभी प्रकार की मृदाओं में उगाया जा सकता है। हालांकि, हल्की मृदाओं में पैदा होने वाली जड़ों में तेल का प्रतिशत काफी कम होता है। इसलिए दोमट रेतीली और लाल मृदा, जो जैविक पदार्थो से भरपूर एवं जिसमें पानी का समुचित निकास हो, इसकी खेती के लिए आदर्श मानी जाती है। परिपक्व वेटिवर जलभराव की स्थिति में भी जीवित रहता है। यह क्षारीय मृदा, जिसका पी-एच मान 8.5 से 10 हो, उसमें भी उगाया जा सकता है। वेटिवर प्रदूषित पानी में घुलित भारी धातुओं को भी अवशोषित करता है एवं आर्सेनिक, कैडमियम, क्रोमियम, निकल, सीसा, पारा, सेलेनियम और जस्ता को सहन कर सकता है।

जलवायु

वेटिवर की खेती सामान्यत: सभी प्रकार की जलवायु में की जा सकती है। यह 15 डिग्री सेल्सियस से 55 डिग्री सेल्सियस तापमान को सहन कर सकता है। इसकी जड़ों की वृद्धि एवं विकास के लिए 25 डिग्री सेल्सियस तापमान उपयुक्त होता है एवं 5 डिग्री सेल्सियस से नीचे इसकी जड़ों का विकास रुक जाता जाता है। अत्यधिक ठंडी परिस्थितियों में इसके तने सुषुप्तावस्था में बैंगनी रंग के हो जाते हैं या मर जाते हैं। भूमिगत बढ़वार वाला हिस्सा जीवित रहता है और अनुकूल परिस्थितियां आते ही, इसकी स्थिति में सुधार होता है और फिर से अपनी बढ़वार प्राप्त कर लेता है। यह सूखा, बाढ़, जलमग्नता के लिए सहनशील है।

प्रसार विधि

वेटिवर को बीज या स्लिप के माध्यम से प्रसारित किया जा सकता है, आमतौर पर स्लिप का इस्तेमाल किया जाता है। स्लिप के माध्यम से प्रसारित पौधों में सीमित विविधता दिखाई देती है, जबकि, बीज से विकसित पौधों में विविधता दिखाई देती है, जो नई किस्मों के विकास एवं प्रसार के उपयोग में लाया जाता है। उत्तर भारतीय किस्मों में, प्राकृतिक रूप से खुद व खुद बीज से इसका प्रसार स्वत: होता रहता है। बीज की उपज 400-650 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर के बीच होती है।

रोपण का समय एवं विधि

वेटिवर रोपण का सबसे उपयुक्त समय मानसून की शुरुआत या जून-अगस्त का महीना होता है। दक्षिण भारतीय परिस्थितियों में, जहां मानसून की शुरुआत जल्दी होती है, इसके रोपण का समय फरवरी-अप्रैल है। स्लिप को राइजोम के साथ क्लंप से अलग किया जाता है एवं तने के हिस्से का 15-20 सें.मी. हिस्सा रखकर बाकी सारी पत्तियों को हटा देते हैं। इसके बाद 10 सें.मी. की गहराई के साथ 60×30 सें.मी./60×45 सें.मी. /60×60 सें.मी. के अंतराल पर लगा देते हैं। पौधों की संख्या 27,800 से 1,10,000 पौधे/हैक्टर होती है। यदि सिंचाई की सुविधा उपलब्ध हो, तो मार्च-अप्रैल का समय रोपण के लिए उपयुक्त होता है।

वेटिवर की कटाई

वेटिवर की जड़ों की कटाई, उपज और तेल का प्रतिशत पर्यावरण में बदलाव के साथ बदलता है। रोपण के 15-24 महीनों के बाद जड़ों को काटा जाता है। जल्द कटाई से तेल की अधिक उपज होती है, लेकिन तेल में विशिष्ट गुरुत्व और मूल्यवान उबलते घटकों की कमी होती है। यदि जड़ें दो वर्ष तक जमीन में रहती हैं, तो तेल की गुणवत्ता में सुधार होता है, लेकिन पैदावार काफी कम हो जाती है। आमतौर पर फसल की कटाई दिसंबर-फरवरी के दौरान की जाती है।

प्रसंस्करण

वेटिवर को 5-10 सें.मी. नीचे से छोड़कर ऊपरी भागों को काटकर हटा लेते हैं, फिर नीचे के भाग को पानी से धो लेते हैं। इसके बाद आसवन (तेल निकालने की विधि) से पहले 1-2 दिनों के लिए छाया में सुखा लिया जाता है। सुखाने के बाद, हाइड्रो या भाप आसवन विधि के माध्यम से जड़ों से तेल निकाला जाता है। उत्तर भारतीय किस्मों में आसवन की प्रक्रिया 12-14 घंटों में पूरी होती है, जबकि दक्षिण भारतीय किस्मों में 72-96 घंटे की लंबी अवधि की आवश्यकता होती है। इसमें कम वाष्पशील तेल और उच्च क्वथनांक होते हैं। आसवन पूरा होने के बाद इसे दूसरे बर्तन में डालकर फिल्टर कर लेते हैं। आसुत तेल में 20 ग्राम/लीटर की दर से सोडियम सल्फेट या साधारण नमक डालकर इसमें अतिरिक्त नमी को हटाते हैं। संग्रहीत जड़ों से प्राप्त तेल ताजा कटी हुई जड़ों से प्राप्त तेल की तुलना में अधिक चिपचिपा और बेहतर सुगंध वाला होता है। इसकी ताजा जड़ों को आसवन के लिए कम समय की आवश्यकता होती है और ये अधिक तेल उपज देती हैं।

आंवले की वैज्ञानिक खेती एवं उपयोग

राजबाला मीणा*, हरि सिंह मीना, हर लाल मीणा*** और **दुर्गा शंकर मीणा***

आंवला, यूफोरबिएसी परिवार का पौधा है। इसका फल कैप्सूल अंडाकार, गोल से लेकर चपटा गोलाकार, रंग सफेद, छिलका हरा चिकना से खुरदरा, अर्द्धपारदर्शी, 6-8 खंडों में विभाजित होता है। फलों की सतह चिकनी या हल्की उठी हुई होती है। फल की गुठली कड़ी, गोल से लेकर त्रिकोणीय आकार की होती है। बीज की बाहरी भित्ति कड़ी और बीज हल्के भूरे रंग से लेकर गहरे भूरे रंग की होती है। आंवला, विटामिन 'सी' से भरपूर होता है। यह विभिन्न प्रकार के रोगों एवं व्याधियों से दूर रखने के लिए एक गुणकारी औषधि की तरह है। इसके फलों को, ताजा एवं सुखाकर, दोनों तरह से उपयोग में लाया जा सकता है।

आंवले का पौधा, जलवायु एवं भूमि, दोनों के प्रति काफी सहिष्णु होता है। इसके लिए शुष्क जलवायु उत्तम मानी जाती है। उचित जल निकास के साथ बलुई दोमट से मटियार दोमट मृदा, जो कैल्शियमयुक्त हो, सर्वोत्तम रहती है। भारत में आंवले की खेती समुद्र तल से 1800 मीटर तक की ऊंचाई वाले क्षेत्रों में सफलतापूर्वक की जा सकती है। जाड़े में इसके नये बगीचों में पाले का हानिकारक प्रभाव पड़ता है, परन्तु एक पूर्ण विकसित आंवले का वृक्ष 0-46 डिग्री सेल्सियस तापमान तक सहन करने की क्षमता रखता है। गर्म वातावरण, पुष्प कलिकाओं के निकलने में सहायक होता है। जुलाई-अगस्त में अधिक आर्द्रता का वातावरण सुषुप्त छोटे फलों की वृद्धि में सहायक होता है।

*भाकृअनुप-अखिल भारतीय समन्वित बाजरा अनुसंधान परियोजना, कृषि विश्वविद्यालय जोधपुर-342001 (राजस्थान); **पादप कार्यिकी संभाग, भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012

किस्में

आंवले की किस्मों में चकैय्या, बनारसी, फ्रांसिस, कृष्णा, कंचन, नरेंद्र आंवला 6,7, 10, गंगा एवं भवानीसागर प्रमुख हैं।

भंडारण

आंवले के भंडारण का मुख्य उद्देश्य संसाधन हेतु इसकी उपलब्धता को बढ़ाना है। किस्मों के अनुसार परिपक्व फलों को 6 से 9 दिनों तक कम ऊर्जा वाले शीतकक्षों में रखा जा सकता है। इसके अतिरिक्त इसके फलों को शीत तापमान (5-7 डिग्री सेल्सियस) पर दो माह तक एवं फलों को 15 प्रतिशत नमक के घोल में रख कर 75 दिनों तक सामान्य तापमान पर भंडारित किया जा सकता है।

खाद एवं उर्वरक

आंवले को उचित वृद्धि और विकास के लिए प्रत्येक वर्ष 100 ग्राम नाइट्रोजन, 60 ग्राम फॉस्फोरस एवं 75 ग्राम पोटाश प्रति वृक्ष की दर से देना चाहिए। इसके साथ ऊसर भूमि में जिंक की कमी के लक्षण दिखाई देने पर 2-3 वर्षों के अंतराल पर 250 से 500 ग्राम जिंक सल्फेट फलन वाले पौधों में देना चाहिए।

सिंचाई

आंवले में सिंचाई गर्मियों में जहां 2 बार की जाती है, वहीं सर्दियों में केवल एक बार ही करनी होती है। इसके अलावा बारिश शुरू होने से पहले पौधों के चारों तरफ गड्ढा बना देने से पौधों को भरपूर मात्रा में पानी मिलता है तथा बारिश खत्म होने पर इन थालों को फसल अवशेष से आवरित कर देने से मृदा में लंबे समय तक नमी बनी रहती है।

पुष्पण एवं फल वृद्धि

आंवले में फूल बसंत ऋतु में आते हैं। फूलों का खिलना मार्च के अंतिम सप्ताह से शुरू होकर तीन सप्ताह तक चलता है। बीजू किस्मों में पुष्पण की क्रिया पहले प्रारंभ होती है, जबकि व्यावसायिक किस्मों में पुष्पण बाद में होता है। दक्षिण भारत में पुष्पण वर्ष में दो बार (फरवरी-मार्च और जून-जुलाई) होता है। पहली बार वाले पुष्पण की तुलना में दूसरी बार वाले पुष्प कम उपज देते हैं। फलों में सर्वाधिक वृद्धि सितंबर माह में होती है। उत्तर भारतीय दशाओं में फल नवंबर तक परिपक्व हो जाते हैं।

रोग नियंत्रण

आंवले में मुख्यत: ऊतक क्षय एवं रस्ट रोग लगता है। इनके नियंत्रण के लिए 0.4-0.5 बोरेक्स का छिड़काव पहली बार अप्रैल में, दूसरी बार जुलाई में एवं तीसरी बार सितंबर में करना चाहिए। ऊतक क्षय एवं रस्ट नियंत्रण हेतु 0.2 डाईथेन जेड 78 या मैंकोजेब का छिड़काव 15 दिनों के अंतराल पर करना चाहिए।

कीट नियंत्रण

आंवले में शूट गॉल मेज के अलावा छाल एवं पत्ती खाने वाले कीट प्रमुख हैं। इनके नियंत्रण हेतु छाल वाले कीटों के लिए मेटासिस्टॉक्स या डाइमिथोएट और इसके अलावा मिट्टी के तेल में रुई को भिगोकर तने के छिद्रों में डालकर चिकनी मिट्टी से बंद कर देना चाहिए। पत्ती खाने वाले कीट के लिए 0.5 मि.ली. फॉस्फोमिडान प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए। शूट गॉल मेज के लिए 1.25 मि.ली. मोनोक्रोटोफॉस या 0.6 मि.ली. फॉस्फोमिडान को प्रति लीटर पानी मिलाकर छिड़काव करना चाहिए।

परिपक्वता

आंवले की व्यावसायिक किस्मों में परिपक्वता सूचकांक का निर्धारण फल लगने के उपरांत टी.एस.एस., अम्ल अनुपात एवं आपेक्षिक घनत्व के अनुसार किया जाता है। बनारसी एवं कृष्णा किस्मों में परिपक्वता फल लगने के 17-18 सप्ताह बाद आती है, जबकि कंचन और फ्रांसिस में 20 सप्ताह का समय लगता है। चकैय्या किस्म में फल परिपक्वता के लिए लगभग 23 सप्ताह लगते हैं। परिपक्वता के समय आपेक्षिक घनत्व सभी किस्मों में 1.0 से अधिक पाया जाता है। आंवले में परिपक्वता निर्धारण का सबसे अच्छा तरीका फलों के रंग में परिवर्तन (हरे से चमकदार सफेद हरा या पीला हरा) या बीज के रंग परिवर्तन (हल्के पीले सफेद से भूरे) को देखकर किया जाता है।

तुड़ाई

आंवले के फलों की तुड़ाई हाथ से करते हैं। यह क्रिया बड़े वृक्षों में संभव न होने के कारण, बांस से बनी सीढ़ियों पर चढ़कर भी की जाती है।

फलन

आंवले का कलमी पौधा रोपण से तीसरे वर्ष तथा बीजू पौधा 6-8 वर्ष बाद फल देना प्रारंभ कर देता है। कलमी पौधा 10-12 वर्ष बाद पूरी तरह फल देने लगता है। पौधे की अच्छी तरह से देखभाल करने पर यह लंबे समय फल देता रहता है।

श्रेणीकरण

आंवले के फलों को तीन श्रेणियों में उनके आकार, भार, रंग एवं पकने के समय के आधार पर बांटा जा सकता है। बड़े आकार के फल (व्यास 4 सें.मी. से अधिक) को मुरब्बा बनाने के लिए प्रयोग किया जाता है। मध्यम आकार के फलों को अन्य परिरक्षित पदार्थ बनाने में एवं छोटे आकार के फलों को औषधीय उत्पादों जैसे-च्यवनप्राश, त्रिफला इत्यादि बनाने में उपयोग किया जाता है।

पैकिंग

आंवले के फलों का अच्छी तरह से

मुरब्बा

बाजार में उपलब्ध आंवले के मूल्यवर्द्धित उत्पादों में मुरब्बा एक प्रमुख उत्पाद है। इसे बनाने के कई तरीके हैं। पारंपरिक रूप से मुरब्बा बनाने हेतु गुदे हुए आंवले के फलों को 2-8 प्रतिशत नमक के घोल या चूने के पानी में क्रमश: 1-1 दिन तक रखते हैं। इससे फलों का कसैलापन दूर हो जाता है। इसके बाद फलों को अच्छी तरह से धोकर उतनी ही मात्रा में चीनी मिलाकर एक रात के लिए रख देते हैं। दूसरे दिन चीनी के घोल को 700 ब्रिक्स टी.एस.एस. तक सांद्रित करके उसमें फलों को डुबो देते हैं। इस प्रक्रिया को 3 से 5 बार दोहराते हैं। अंत में तैयार मुरब्बे को साफ-सुथरे जार में 700-720 ब्रिक्स वाले शर्करा घोल के साथ डिब्बाबंदी कर देते हैं।

आंवला है एक बहुपयोगी फल

रखरखाव एवं पैकिंग न करने से लगभग 20 प्रतिशत तक का नुकसान होता है। इसलिए आंवले की पेटीबंदी करते समय अत्यधिक सावधानी रखने की आवश्यकता होती है। जूट की बोरियां एवं अरहर के तनों से बनी टोकरियां प्राय: आंवले की पैकिंग में प्रयोग की जाती हैं।

प्रसंस्करण

आंवले के फल अम्लीय एवं कसैले होने के कारण तुरंत उपयोग के लिए उपयुक्त नहीं होते हैं। अत: फल उत्पाद को प्रसंस्करित करने के बाद उपयोग किया जा सकता है।

जूस

आंवले के छोटे-छोटे टुकड़ों को फिल्टर प्रेस द्वारा दबाकर जूस निकालने के बाद 780 ब्रिक्स तक गर्म करके जीवाणुहीन कर दिया जाता है। तैयार जूस को कांच की निर्जमीकृत बोतलों में भर देते हैं। इस प्रकार से तैयार जूस 500 पी.पी.एम. सल्फर डाइऑक्साइड या एक ग्राम पोटेशियम मेटाबाईसल्फाइट प्रति लीटर की दर से मिलाकर परिरक्षित किया जाता है।

स्क्वैश

स्क्वैश, जूस या गूदा से बनाया जाता है। इसके लिए 35 से 40 प्रतिशत जूस में 50 प्रतिशत चीनी, 1.1 प्रतिशत सिट्रिक अम्ल एवं 350 पी.पी.एम. सल्फर डाइऑक्साइड (750 मि.ली./कि.ग्रा.) को मिलाने के बाद हल्की आंच पर गर्म करके, साफ की गई निर्जर्मीकृत बोतलों में भरकर भंडारित करते हैं। उपयोग करने के लिए तीन भाग पानी में एक भाग स्क्वैश मिला लेना चाहिए।

शर्करा के घोल में आंवले की फांकें

यह एक नया उत्पाद है। इसमें आंवले में विद्यमान पौष्टिक गुणों को अधिक मात्रा में संरक्षित किया जाता है, जो मुरब्बा बनने की जटिल प्रक्रिया के दौरान नष्ट हो जाते हैं। फलों को खौलते पानी में 6-8 मिनट तक रखते हैं। फिर ठंडा करके, फांकें अलग-अलग कर लेते हैं। इसके बाद इन फांकों को 0.5 प्रतिशत खटासयुक्त विभिन्न सांद्रता वाले (50, 60 एवं 700 ब्रिक्स) शर्करा के घोलों में क्रमश: एक घंटे के लिए रखते हैं। अंत में शर्करा के घोल में अतिरिक्त चीनी मिलाकर इसे 700 ब्रिक्स तक सांद्रित करके उबाल लेते हैं। अब इन फांकों को इस घोल में मिलाकर साफ-सुथरे जार में बंद कर लेते हैं।

फलों से लदी आंवले की डाली

चूर्ण

आंवले के फल से अलग की गई फांकों को छोटे-छोटे टुकड़ों में काटकर उन्हें विद्युतचालित यंत्र में 60 डिग्री सेल्सियस पर 8-10 घंटे सुखाते हैं। इसके बाद इनको पीसकर चूर्ण बना लेते हैं। आंवले का चूर्ण बनाने हेतु प्रति 100 ग्राम चूर्ण में 8 ग्राम साधारण नमक, 16 ग्राम काला नमक, 15 ग्राम चीनी, 3 ग्राम सिट्रिक अम्ल, 2 ग्राम पिसी काली मिर्च, 1 ग्राम हींग, 1 ग्राम भुना पिसा जीरा, 1 ग्राम पिसी सौंफ, 1.5 ग्राम सोंठ एवं 0.5 ग्राम अजवायन मिलाते हैं। अजवायन के नहीं होने पर 2-5 ग्राम पिसी पुदीने की पत्ती को भी मिला सकते हैं। तैयार चूर्ण को सूखे जार में हवा अवरोधक अवस्था में भंडारित कर लेते हैं।

अन्य उपयोग

आंवला तीव्र शीतलतादायक, मूत्रक और मृदुरेचक होता है। एक चम्मच आंवले के रस को यदि रोजाना शहद के साथ मिलाकर सेवन किया जाए, तो इससे कई प्रकार के विकार जैसे-क्षय रोग, दमा, खून का बहना, स्कर्वी, मधुमेह, खून की कमी, स्मरण शक्ति की दुर्बलता, कैंसर, अवसाद एवं अन्य मस्तिष्क विकार, इनफ्लुएंजा, ठंडक, समय से पहले बुढ़ापा, बालों का गिरना एवं बालों के सफेद होने से बचा जा सकता है। प्राय: देखा गया है कि यदि एक चम्मच ताजे आंवले का रस, एक कप करेले के रस में मिश्रित करके दो महीने तक प्रात:काल सेवन किया जाए, तो प्राकृतिक इंसुलिन का स्राव बढ़ जाता है। इस प्रकार यह मधुमेह रोग में रक्त मधु को नियंत्रित करके शरीर को स्वस्थ करता है। इसके साथ ही रक्त की कमी, सामान्य दुर्बलता तथा अन्य कई परेशानियों से मुक्ति दिलाता है।

कैंडी

फलों को अच्छी तरह पानी से धोने के बाद उन्हें खौलते पानी में 6-8 मिनट तक गरम करते हैं। फिर ठंडा करने के बाद फलों से फांके अलग कर लेते हैं। अब इन फांकों को 600 ब्रिक्स शर्करा एवं 0.7 प्रतिशत अम्लीय घोल (1-1.5) के अनुपात में रातभर डुबोकर रखना चाहिए, ताकि परासरणी विधि द्वारा फांकों में शर्करा तथा अम्ल को रिसाया जा सके। दूसरे दिनों फांकों को घोल से निकालकर, घोल में और शर्करा मिला कर उसकी सांद्रता 700 ब्रिक्स तक कर लेते हैं। अब टुकड़ों को पुन: रातभर भिगो लेते हैं। अगले दिन शर्करा के घोल से निकालकर टुकड़ों को गुनगुने पानी में धो लेते हैं, ताकि फांकों की सतह पर लगी शर्करा घुल जाये। फिर फांकों को 60 डिग्री सेल्सियस तापमान पर विद्युतचालित निर्जलीकरण यंत्र में 8-10 घंटों तक रखकर सुखा लेते हैं। इन सूखी फांकों में पानी की मात्रा 10 प्रतिशत तक होनी चाहिए। इस प्रकार तैयार फांकें कैंडी कहलाती हैं। अब इन्हें पॉलीथीन की थैलियों और जार में भरकर भंडारित करते हैं।

सौंफ की फसल से अर्थव्यवस्था में सुधार

दिलीप सिंह*

'मसालों की भूमि' भारत, सौंफ का सबसे बड़ा उत्पादक देश है। इसके अंतर्गत क्षेत्रफल, उत्पादन व उत्पादकता क्रमशः 0.66 लाख हैक्टर, 1.04 लाख टन व 15.75 क्विंटल/हैक्टर है। (वर्ष 2017-18 स्रोतः कृषि, सहकारिता एवं किसान कल्याण विभाग) देश के 'बीजीय मसालों का कटोरा' व सबसे बड़े सौंफ उत्पादक राज्यों राजस्थान व गुजरात में क्रमशः 30,720 टन व 96,770 टन सौंफ का उत्पादन होता है। भारत से सौंफ के बीजों (दानों) का निर्यात लगभग 17,300 टन होता है, जिसका मूल्य 16,001 लाख रुपये है। इनका देश के बीजीय मसालों के निर्यात में मात्रात्मक व मूल्य आधार पर क्रमशः 6.82 प्रतिशत व 6.51 प्रतिशत हिस्सा है (भारतीय मसाला बोर्ड, 2015)। सौंफ के बीज में लगभग 9.5 प्रतिशत प्रोटीन, 13.4 प्रतिशत खनिज लवण व विभिन्न विटामिन की भी संतोषजनक मात्रा पाई जाती है। इसे शर्बत, ठंडाई, अचार, सौंफ पानी और शिशुओं की दवा बनाने में इस्तेमाल करते हैं।

राजस्थान में भाकृअनुप-राष्ट्रीय बीजीय मसाला अनुसंधान केन्द्र (अजमेर), श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय (जोबनेर) व राजस्थान के अन्य कृषि विश्वविद्यालयों में भी बीजीय मसालों पर अनुसंधान चल रहा है। अजमेर से सौंफ की किस्में-अजमेर सौंफ-1, अजमेर सौंफ-2 व जोबनेर से विकसित किस्में-आरएफ-101, आरएफ-125, आरएफ-205, आरएफ-143 व आरएफ-145 हैं।

भरतपुर जिले में सौंफ की खेती की तरफ किसानों का रुझान बढ़ रहा है। इसकी खेती सिंचित अवस्था में करने पर अन्य फसलों जैसे-गेहूं व सरसों की तुलना में सौंफ की खेती लाभदायक साबित हो रही है। कमजोर भूमि, कम पोषक तत्वों की आवश्यकता तथा पशुओं द्वारा खेत में कोई नुकसान नहीं करना भी किसानों को इसकी खेती की तरफ आकर्षित कर रहा है। कीटों व रोगों का कम प्रकोप, बेहतर पैदावार व अधिक बाजार मूल्य (6,000 से 7,000 रुपये प्रति क्विंटल) होने के कारण किसानों की आर्थिक स्थिति सुधारने में सौंफ महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

*सहायक प्राध्यापक (उद्यान), कृषि विज्ञान केन्द्र, कुम्हेर, भरतपुर (राजस्थान)

सीड मिज

यह कीट बीजीय मसालों में नुकसान पहुंचाता है। खड़ी फसल में सीड मिज कच्चे फलों/दानों में अण्डे देते हैं। सुंडियां अंदर से बीजों को खाती हैं। सूंडी व प्यूपा अवस्था फसल कटाई के समय बीज में उपस्थित रहता है। वयस्क कीट भण्डारण में दानों में छेद बनाकर बाहर निकलते हैं। इसमें सौंफ की बीज वाली फसल में 40 प्रतिशत तक नुकसान हो सकता है।

कृषि विज्ञान केन्द्र, कुम्हेर, भरतपुर द्वारा वर्ष 2016-17 में रबी मौसम में भरतपुर जिले में उन्नत तकनीकों पर प्रदर्शन लगाये गए। किसानों की परंपरागत तकनीकों की तुलना में प्रदर्शनों में पैदावार 22.30 से 23.80 क्विंटल/हैक्टर, पैदावार में वृद्धि 18.41 प्रतिशत तक व शुद्ध आय 116800 रुपये/हैक्टर तक प्राप्त हुई।

सौंफ की उन्नत सस्य क्रियाएं

जलवायु

इसके लिए शुष्क एवं ठंडा मौसम उपयुक्त रहता है। परन्तु फल अवस्था कम तापमान से प्रभावित होती है। फूल आते समय लंबे समय तक बादल व अधिक नमी से रोगों का प्रकोप अधिक होता है।

भूमि व खेत की तैयारी

जीवांशयुक्त सभी प्रकार की भूमि, बलुई दोमट, जिसका जल निकास ठीक हो, उपयुक्त रहती है। नमी की कमी होने पर सिंचाई कर खेत की जुताई व पाटा चलायें।

उन्नत किस्में

अजमेर सौंफ-1 व अजमेर सौंफ-2

180-190 दिनों में पकाव वाली किस्में, अगेती व सर्दी के मौसम की बुआई के लिए उपयुक्त हैं। इनके बीज आकर्षक व बड़े होते हैं। अगेती फसल व सर्दी की फसल से औसत पैदावार क्रमशः 25.0 व 19.5 क्विंटल प्रति हैक्टर प्राप्त होती है। ये किस्में रामूलेरिया व अगेती झुलसा रोगों के लिए प्रतिरोधी हैं।

दानों में वाष्पशील तेल की औसत मात्रा 1.6-1.9 प्रतिशत पाई जाती है।

राजस्थान सौंफ-125

जल्दी पकने वाली (120-130 दिनों में) छोटे पौधे, ठोस पुष्पक्रम, लंबे, बड़े दाने व औसत पैदावार 17.3 क्विंटल/हैक्टर तक है। 29.45 क्विंटल/हैक्टर तक पैदावार क्षमता।

राजस्थान सौंफ-101

बड़े पुष्पक्रम, लंबे व बड़े दाने वाली व देर से पकने वाली किस्म (150-160 दिनों) व औसत पैदावार 15.5 क्विंटल/हैक्टर है।

गुजरात सौंफ-1

सूखा सहनशील व अगेती बुआई लिए उपयुक्त, पत्ती धब्बा व अन्य रोगों के लिए मध्यम रूप से सहनशील है। इसके बीज अण्डाकार, बड़े व गहरे भूरे रंग के, देर से पकाव (225 दिन) व औसत पैदावार लगभग 17.0 क्विंटल/हैक्टर।

राजस्थान सौंफ-143

दोमट व काली मृदा के लिए उपयुक्त, औसत पैदावार 15 क्विंटल/हैक्टर। अन्य किस्में आर.एफ.-178, आर.एफ.-281, आर.एफ.-205, आरएफ-145 व गुजरात सौंफ-1 आदि।

प्रक्षेत्र पर सौंफ फसल प्रदर्शन

खाद एवं उर्वरक

खेत की तैयारी से पहले 10-15 टन/हैक्टर अच्छी तरह सड़ी हुई गोबर की खाद या कम्पोस्ट मृदा में मिलाते हैं। मृदा की जांच के आधार पर नाइट्रोजन, फॉस्फोरस व पोटाश की मात्रा क्रमशः 90, 60 व 60 कि.ग्रा./हैक्टर की दर से देते हैं। 30 कि.ग्रा. नाइट्रोजन व सम्पूर्ण फॉस्फोरस व पोटाश मशीन द्वारा अंतिम जुताई के साथ देते हैं। 30 कि.ग्रा. नाइट्रोजन बुआई के 45 दिनों बाद व 30 कि.ग्रा. नाइट्रोजन फूल आने के समय सिंचाई के साथ देते हैं। आवश्यकता होने पर सूक्ष्म पोषक तत्व जिंक सल्फेट, फेरस सल्फेट व कैल्शियम सल्फेट प्रत्येक तत्व 0.5 प्रतिशत की दर से छिड़काव करते हैं।

बीज की मात्रा व बुआई

सौंफ की सीधी बुआई के लिए 8-10 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर को फफूंदीनाशक दवा कार्बेन्डाजिम 2 ग्राम या जैविक ट्राइकोडर्मा 6-8 ग्राम बीज की दर से उपचारित करते हैं। सीडड्रिल मशीन से 45 सें.मी. की दूरी पर पंक्तियों में 2 सें.मी. गहराई पर बुआई करने से सिंचाई के पानी की बचत व अधिक पैदावार मिलती है। बुआई सितंबर-अक्टूबर में करते हैं। रोपण विधि से पौधे तैयार करने के लिए 3-4 कि.ग्रा. बीज को 100 वर्गमीटर नर्सरी क्षेत्र में जुलाई-अगस्त में बुआई करने से एक हैक्टर में रोपाई के लिए पौध तैयार हो जाती है। 7-8 दिनों में बीजों का अंकुरण हो जाता है। अंकुरण से पूर्व आवश्यकता होने पर बहुत हल्की सिंचाई भी कर सकते हैं। 7-8 सप्ताह की पौध रोपाई योग्य हो जाती है। रोपाई 45 सें.मी. की दूरी पर बनी पंक्तियों में 20-25 सें.मी. पौधों के बीच की दूरी रखते हुए करते हैं। रोपाई कर हल्की सिंचाई अवश्य करें।

सिंचाई

जड़ें गहरी होने के कारण निराई-गुड़ाई कर, हल्की सिंचाई कर पानी की बचत कर

चीलस सवकल रोग

जेसिड कीट द्वारा फैलने वाले माइकोप्लाज्माजनित इस रोग में पत्तियों के गुच्छे बन जाते हैं। प्रबंधन के लिए अंतरासस्यन पद्धति में सौंफ व मूंग (1:1 अनुपात) लगाते हैं। मूंग की बुआई मानसून के शुरू होने पर व सौंफ की रोपाई 15 अगस्त के आस-पास करें। रोपाई के समय पौधों की जड़ों को 0.04 प्रतिशत इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. के घोल में 10 मिनट डुबोकर रोपाई करते हैं। एक छिड़काव इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. की 0.3 मि.ली./लीटर पानी की दर से रोपाई के एक महीने बाद करते हैं। कीटों से बचाव के लिए नर्सरी को 40 मेस के नाइलोन जाल से ढकते हैं।

लाभकारी है सौंफ की खेती

सकते हैं। मृदा में नमी कम होने पर बुआई के 3-4 दिनों बाद हल्की सिंचाई करें, क्योंकि पानी का बहाव तेज होने पर बीज बहकर किनारे पर इकट्ठे हो जायेंगे। बीजों का अंकुरण पूर्ण होने के लिए दूसरी सिंचाई बुआई के 12-15 दिनों बाद करनी चाहिए। फूल आने के बाद फसल को पानी की कमी नहीं होनी चाहिए। भूमि व जलवायु को ध्यान में रखते हुए आवश्यकतानुसार 25-30 दिनों के अंतर पर 4-5 सिंचाइयां करते हैं।

खरपतवार नियंत्रण

गर्मियों में गहरी जुताई करें। खाद की अच्छी तरह से कम्पोस्ट बनायें, जिससे खाद के अंदर खरपतवारों के बीज मर जाएं। सौंफ की बुआई के 25 व 50 दिनों बाद दो बार हाथ से निराई-गुड़ाई करें। सघन स्थानों से पौधे उखाड़कर विरल स्थानों पर लगा सकते हैं। बुआई के तुरन्त बाद खरपतवारों के उगने से पहले मृदा में नमी की उपस्थिति में खरपतवारनाशी ऑक्सीफ्लूरोफेन 0.5 कि.ग्रा. या पेन्डीमिथेलीन (स्टाम्प) 1.0 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व प्रति हैक्टर 1000 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

फसल संरक्षण

कीट प्रबंधन

सफेद मक्खी, मोयला व मकड़ी कीट पौधे के कोमल भागों से रस चूसते हैं।

थ्रिप्स

ये छोटे आकार के कीट, कोमल एवं नई पत्तियों से हरा पदार्थ खुरचकर खाते हैं। इससे पत्तियों पर धब्बे पड़ जाते हैं तथा पत्ते पीले होकर सूख जाते हैं।

प्रबंधन के लिए फसल पर डाइमिथोएट 30 ई.सी. या मैलाथियॉन 50 ई.सी. की एक मि.ली. मात्रा प्रति लीटर पानी की दर से छिड़कें। आवश्यकतानुसार 15-20 दिनों बाद छिड़काव दोहरायें। नीम के बीजों के

सौंफ के तैयार बीज

पुष्पावस्था में सौंफ

सत् का 5 प्रतिशत की दर से छिड़काव कर सकते हैं।

प्रबंधन

राजस्थान में सौंफ की बुआई सितंबर के तीसरे सप्ताह में करने पर अक्टूबर व नवंबर की बुआई की तुलना में कीटों से नुकसान कम पाया गया है। अकेली फसल की तुलना में सूवा के साथ सौंफ की अंतरासस्यन 2:1 व 3:1 के अनुपात में करने से सकारात्मक परिणाम प्राप्त हुए हैं। जैविक कीटनाशी करंज या नीम खली 500 कि.ग्रा./हैक्टर बुआई के समय मृदा में मिलायें और तीन बार नीम बीज सत या करंज बीज सत 5 प्रतिशत या फ्रेनवेलनेट 0.01 प्रतिशत का पुष्पण आरंभ होने पर 15 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करें।

रोग

छाछ्या (पाउडरी मिल्ड्यू)

इस रोग की शुरुआत में पत्तियों एवं टहनियों पर सफेद चूर्ण (फफूंद) दिखाई देते हैं, जो बाद में पूरे पौधे पर फैल जाते हैं। इसकी रोकथाम के लिए कैराथेन 0.1 प्रतिशत या घुलनशील गंधक (80 प्रतिशत) 0.25 प्रतिशत की दर से छिड़कें।

जड़ व तना गलन

रोगी पौधों का तना नीचे से मुलायम हो जाता है और जड़ें गल जाती हैं। जड़ों पर छोटे-बड़े काले रंग के स्कलेरोशिया दिखाई देते हैं। बुआई पूर्व कार्बेन्डाजिम या ट्राइकोडर्मा से बीजोपचार करें। बुआई से पूर्व ट्राइकोडर्मा मित्र फफूंद (जैविक) की 4-5 कि.ग्रा. मात्रा को 50 कि.ग्रा. गोबर की खाद में मिलाकर 4-5 दिनों तक छाया में रखने के बाद सायंकाल में खेत में बिखेरकर जुताई करें। हल्की सिंचाई करें व जल निकास की व्यवस्था करें।

रामूलेरिया ब्लाइट

बुआई के 60-70 दिनों बाद नीचे की पुरानी पत्तियों पर गहरे भूरे धब्बे बन जाते हैं, जो बाद में धीरे-धीरे पूरे पौधे पर फैल जाते हैं।

अल्टरनेरिया ब्लाइट

फूलों की कलियां पीली-भूरी होकर सूख जाती हैं।

रोकथाम के लिए कार्बेन्डाजिम 0.1 प्रतिशत या डाइथेन एम. 45-0.2 प्रतिशत के घोल का 15 दिनों के अंतर पर 2-3 छिड़काव करें।

कटाई

सौंफ की फसल के दानों के गुच्छे एक साथ नहीं पकते हैं। जब पूर्ण आकार के दानों का रंग हरे से पीला होने लगे तो गुच्छों को तोड़ लेना चाहिए, क्योंकि इस समय दानों में वाष्पशील तेल की मात्रा अधिक होती है। काटने के बाद सूखते समय फसल को बार-बार पलटते रहना चाहिए, जिससे फफूंद न लगे। जब दानों का आकार पूर्ण विकसित दानों की तुलना में आधा होता है, तभी गुच्छों की कटाई कर साफ जगह पर छाया में फैलाकर सुखाना चाहिए। इसके लिए 10-15 दिनों के अंतराल पर 3-4 बार कटाई कर सकते हैं। सामान्यत: इसकी कटाई अप्रैल में शुरू हो जाती है। बुआई हेतु बीज प्राप्त करने के लिए मुख्य छत्रकों (गुच्छो) के दाने जब पूर्णत: पककर पीले पड़ने लगें तभी कटाई करनी चाहिए।

रोकथाम

बैंगन के प्रमुख रोगों की पहचान और नियंत्रण

कृष्ण कुमार*, **एस.के. पांडे****, **एस.के. सिंह**** और **आर.के. दोहरे*****

बैंगन का वानस्पतिक नाम सोलेनम मेलोंगेना तथा कुल सोलेनेसी है। इसका उत्पत्ति स्थान भारत है। हमारे देश में इसकी खेती आदिकाल से हो रही है। बैंगन को विभिन्न प्रकार की जलवायु में सफलतापूर्वक उत्पादित किया जा सकता है। यही कारण है कि इसकी एक वर्ष में तीन-तीन फसलें ली जाती हैं। इसी प्रकार पूरे वर्ष बैंगन की खेती से फल प्राप्त करके किसान इससे अच्छा लाभ उठा सकते हैं। आलू के बाद बैंगन दूसरी सबसे अधिक खपत वाली सब्जी है।

विश्व में चीन (54 प्रतिशत) के बाद भारत, बैंगन का दूसरा सबसे अधिक उत्पादन (27 प्रतिशत) करने वाला देश है। भारत में 5.5 लाख हैक्टर क्षेत्रफल में इसे उगाया जाता है। बैंगन का पौधा 2 से 3 फीट ऊंचा होता है। इसका फल बैंगनी या हरापन लिए हुए पीले रंग का या सफेद होता है और कई आकार में, गोल, अंडाकार, या सेब के आकार का अथवा लंबा देखने में आया हो सकता है। यह लंबाई में एक फीट तक का भी हो सकता है। बैंगन प्रकृति से गर्म और रुक्ष है। कफ प्रवृत्ति वालों के लिए हितकर है। इसे खाने से भूख लगती है और पाचन क्रिया को तीव्र करता है। बैंगन में 91.5 प्रतिशत जल, 6.4 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट्स, 1.3 प्रतिशत प्रोटीन, 0.3 प्रतिशत वसा तथा 0.5 प्रतिशत खनिज पदार्थ पाये जाते हैं।

फोमोप्सिस अंगमारी तथा फल विगलन (फोमोप्सिस ब्लाइट तथा फ्रूट रॉट)

फोमोप्सिस वेक्सान्स के कारण होने वाले इस रोग के लक्षण तीन रूप में दिखायी पड़ते हैं:

- पौधशाला में आर्द्रपतन के रूप में
- पौध लगाने के बाद खेत में अंगमारी (झुलसा)।
- फल लगने के बाद फल सड़न के रूप में।
- रोग की वृद्धि के लिए आर्द्र मौसम तथा 26 डिग्री सेल्सियस तापमान अनुकूल होता है। पत्तों पर अनियमित आकार का काला किनारायुक्त धूसर भूरा धब्बा दिखाई देता है। वृंत और

रोगग्रसित बैंगन का फल

अंगमारी का प्रकोप

*शोध छात्र, पादप रोग विज्ञान विभाग, **एसोसिएट प्रोफेसर, पादप रोग विज्ञान विभाग,***प्रोफेसर और एसोसिएट डीन, कृषि प्रसार शिक्षा विभाग, सीओए कैम्पस, कोटवा आजमगढ़, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या-224229 (उत्तर प्रदेश)

तनों पर अंगमारी रोग फैलता है और फलों पर छोटे धंसे हुए मटमैले दाग बनते हैं, जो आपस में जुड़कर विगलित क्षत बनाते हैं।

रोग नियंत्रण

- संक्रमित पौधों को खेत से निकाल कर नष्ट करें।
- बाविस्टीन 50 डब्ल्यूपी (2 ग्राम/लीटर) पानी के घोल में नर्सरी से निकाले गये पौध की जड़ों को 20 मिनट डुबोयें। रोपाई के 3 सप्ताह बाद व आवश्यकतानुसार छिड़काव करें।
- गर्मियों में खेत की गहरी जुताई करें।
- कम से कम 3 वर्ष का फसलचक्र अपनायें।
- शकरकंद तथा टमाटर को बैंगन के पास नहीं लगायें। खरपतवारों जैसे-धतूरा को खेत से निकालकर का नष्ट कर दें।

छोटी पत्ती रोग

यह बैंगन का एक माइकोप्लाजमाजनित विनाशकारी रोग है, जो 'लीफ हॉपर' नामक कीट से फैलता है। इसमें रोगी पौधा बौना तथा पत्तियां आकार में छोटी रह जाती हैं। प्राय: रोगी पौधों पर फूल नहीं बनते हैं और पौधा झाड़ीनुमा हो जाता है। यदि इन पौधों पर फल भी लग जाते हैं, तो वे अत्यंत कठोर होते हैं। रोगी पौधों को उखाड़कर जला देना चाहिए।

बैंगन की पैदावार घटा देते हैं रोग

रोग नियंत्रण

लीफ हॉपर से फसल को बचाने के लिए 0.1 प्रतिशत एकाटोक्स या फोलीडोल का फल निर्माण तक छिड़काव करना चाहिए। पौधों को रोपाई से पूर्व टेट्रासाइक्लिन के 100 पी.पी.एम. घोल में डुबोकर रोपाई करनी चाहिए। रोगरोधी किस्में जैसे-पूसा पर्पल क्लस्टर और कटराइन सैल 212-1, सैल 252-1-1 और सैल 252-2-1 उगायें। पेड़ी फसल न लें। ■

छोटी पत्ती रोग से ग्रसित बैंगन का पौधा

बैंगन का मुरझान रोग

यह रोग रालस्टोनिया सोलेन्सियारम नामक जीवाणु से होता है। इस रोग से पौधों की पत्तियां अचानक मुरझाकर नीचे की ओर झुक जाती हैं तथा अंत में पूरा पौधा सूख जाता है। संक्रमित पौधों के तनों तथा जड़ों को काटकर साफ पानी भरे हुए शीशे के गिलास में डालने पर थोड़ी देर में पौधे से सफेद भूरा लसदार रस निकलता है, जिससे पानी दूधिया हो जाता है।

रोग नियंत्रण

- संक्रमित पौधों को खेत से निकाल कर नष्ट करें।
- कम से कम दो वर्षों का फसलचक्र अपनाएं।
- जल निकास की उचित व्यवस्था करें।
- ब्लीचिंग पाउडर 12-15 कि.ग्रा./हैक्टर की दर से खेत में कुंडों में प्रयोग करें।

बैंगन का सूत्रकृमि रोग

यह रोग सूत्रकृमि पेलाडोगाइन की अनेक प्रजातियों द्वारा उत्पन्न होता है, जिससे रोगी पौधों की जड़ों में गांठें बन जाती हैं और रोगी पौधा बौना रह जाता है। पत्तियां हरी पीली होकर लटक जाती हैं। इस रोग के कारण पौधा नष्ट तो नहीं होता, किन्तु गांठों के सड़ने पर सूख जाता है। इसके द्वारा 45-55 प्रतिशत तक हानि होती है।

रोग नियंत्रण

खेत में नमी होने पर नीम की खली एवं लकड़ी का बुरादा 25 क्विंटल प्रति हैक्टर की दर से मृदा में मिला देना चाहिए। रोगी पौधों को उखाड़कर जला देना चाहिए। नेभागान से 12 लीटर प्रति हैक्टर की दर से मृदा का फसल बोने या रोपने से 3 सप्ताह पूर्व शोधन करना चाहिए।

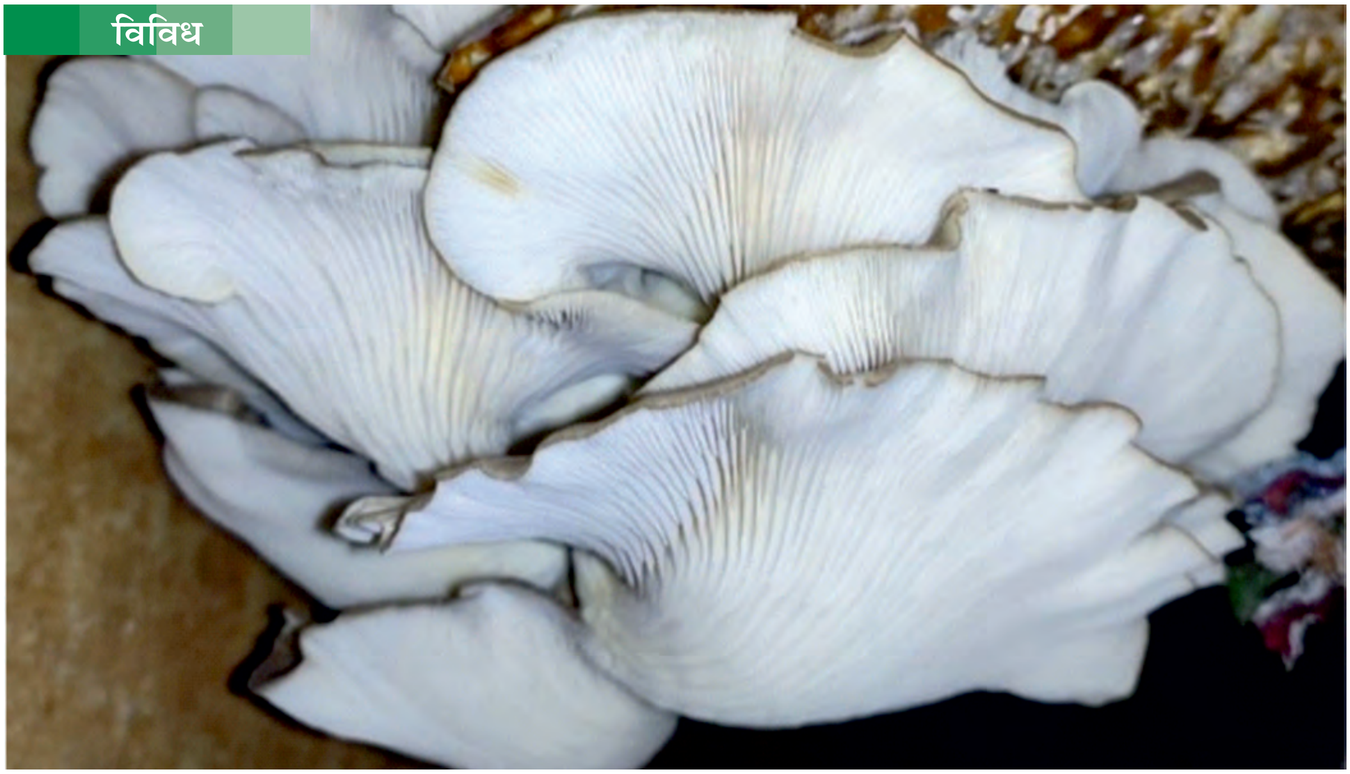

ऑयस्टर मशरूम से किसानों की आय वृद्धि

विजय अविनाशिलिंगम*, एन.ए.*, छीतर मल ओला* और **प्रतिभा तिवारी***

मशरूम, एक प्रकार का हरित लवकरहित कवक है, जो स्वयं का भोजन बनाने में असमर्थ होता है। ये लिग्निन, सेलुलोज तथा हेमिसेलुलोज युक्त कार्बनिक पदार्थों से अपना भोजन प्राप्त करते हैं। भारत में इसकी बहुत सी किस्में पाई जाती हैं, लेकिन इनमें से अधिकांश जहरीली होने के कारण खाने योग्य नहीं होती हैं। देश में मशरूम का भोजन के रूप में उपयोग प्राचीनकाल से किया जा रहा है। यहां मुख्यत: कई वर्षों से उच्च वर्ग के समुदाय में इसका प्रयोग किया जाता रहा है।

ऑयस्टर मशरूम को ढिंगरी मशरूम भी कहते हैं। इसकी लोकप्रियता आजकल दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है, जो कि उत्पादकों के लिए अच्छी खबर है। ऑयस्टर मशरूम की लोकप्रियता का कारण इसमें उपस्थित गुण एवं तत्व हैं। सामान्य सब्जियों की तुलना में मशरूम पोषक तत्वों में अधिक समृद्ध होता है। इसमें विभिन्न प्रकार के पोषक तत्व पाए जाते हैं, जो मानव शरीर के निर्माण तथा वृद्धि के लिए आवश्यक होते हैं।

मशरूम घर

ऑयस्टर मशरूम की खेती के लिए कृषि भूमि की आवश्यकता नहीं होती है। इसकी खेती कच्ची झोपड़ी तथा पक्के घरों में की जा सकती है। घर के आसपास अनुपयोगी जगह पर गांव में आसानी से प्राप्त होने वाले खरपतवार से छप्पर बनाया जा सकता है। लगभग 1000 मशरूम बैग (2 कि.ग्रा. सब्स्ट्रेट प्रति बैग) के लिए 20×20 फीट के कमरे की आवश्यकता होगी।

*भाकृअनुप-केंद्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर-342003 (राजस्थान)

पोषण से समृद्ध ऑयस्टर मशरूम

बीज

ऑयस्टर मशरूम का बीज बहुत ही कम कीमत पर किसी भी प्रमाणित बीज

उत्पादक संस्थान में उपलब्ध रहता है, जिसे किसान आसानी से प्राप्त कर सकते हैं।

उगाने की विधि

ऑयस्टर मशरूम की खेती के लिए उपयुक्त समय अक्टूबर से मध्य फरवरी होता है। कमरे का उपयुक्त तापमान 20-28 डिग्री सेल्सियस तथा सापेक्ष आर्द्रता 80-85 प्रतिशत होनी चाहिए। किसान, इसे सेलुलोजयुक्त पदार्थ जैसे-गेहूं, मक्का, बाजरा, इत्यादि में से किसी एक का चयन भूसा बनाने के लिए कर सकते हैं। भूसे को रातभर स्वच्छ पानी में भिगो दें। 7.5-10 ग्राम बाविस्टिन और 125 मि.ली. फार्मालिन को 100 लीटर पानी में डालकर भूसे को 18 घंटे भिगोकर रखते है। अगली सुबह उपचारित भूसे से अतिरिक्त पानी निकाल दें। यह मुख्यत: रोगाणुमुक्त करने की प्रक्रिया है। लगभग 30 सें.मी. लम्बाई व 20 सें.मी. चौड़ाई के आकार की पॉलीथीन बैग में एक परत भूसे की दबाकर डालें, फिर बीज डालें। यही प्रक्रिया 6 से 7 बार दोहराएं। ध्यान रखने योग्य बात यह है कि प्रत्येक परत के बीच बीज डाले जायें। पॉलीथीन का जो भाग खुला हुआ है उसे बंद करने से पहले किसी नोक वाली चीज से 30 से 35 छेद करें। उसके बाद खुले हुए भाग को रस्सी की सहायता से बंद कर दें। अब इस पॉलीथीन बैग को लकड़ी या स्टील के रैक पर रख दें। इसके लिए बांस की बल्लियों का भी उपयोग किया जा सकता है। अगर जगह की कमी है तो बैग को रस्सी की सहायता से जमीन से ऊपर लटकाया जा सकता है। नमी बनाये रखने के लिए दिन में दो बार स्प्रेयर की सहायता से पानी का छिड़काव करना चाहिए।

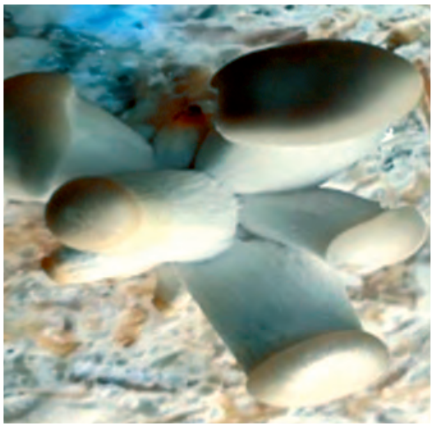

तैयार होते मशरूम

मशरूम के मूल्यवर्द्धित उत्पाद

विपणन एवं प्रसंस्करण

तोड़े गई ऑयस्टर मशरूम की खुम्बी को पोलिप्रोपेलिन के थैलों में छेदकर रखना चाहिए। किसान चाहें तो इन थैलों को गत्ते के डिब्बों में रखकर पास के बाजारों, होटलों आदि में बेच कर अच्छा मुनाफा कमा सकते हैं। मशरूम के प्रसंस्करण द्वारा इससे दोगुना लाभ प्राप्त किया जा सकता है। इसे सुखाकर इससे अचार, सूप, चटनी, पाउडर आदि बनाकर और सुविधानुसार उन्हें बाजार में बेचकर कम समय में अपनी आय में वृद्धि की जा सकती है।

कवकजाल

बिजाई किए गए बैग में 20-22 दिनों में कवकजाल फैल जाता है, जिससे पूरी तरह सफेद दिखाई देने लगता है।

फलनकाय

कवकजाल के 4-5 दिनों बाद फलनकाय बनना शुरू हो जाता है।

तुड़ाई

तैयार होने के बाद बहुत ही सावधानी पूर्वक तोड़ना चाहिए। फलनकाय के 9-10 दिन बाद खुम्बियां तुड़ाई के लिए तैयार हो जाती हैं।

पैदावार

ऑयस्टर मशरूम की पैदावार 500 से 700 ग्राम प्रति कि.ग्रा. सब्स्ट्रेट से प्राप्त की जा सकती है। यह अनुकूलतम वातावरण व सब्स्ट्रेट के अनुसार बढ़ भी सकती है।

भंडारण

साधारणत: ताजा मशरूम का प्रयोग करना ही अच्छा होता है, लेकिन 5 डिग्री सेल्सियस तापमान पर भी 4-5 दिनों के लिए भंडारण किया जा सकता है। धूप में सुखाकर व पाउडर बनाकर इसे अधिक समय तक भण्डारित किया जा सकता है।

तुड़ाई के लिए तैयार मशरूम

किसानों की आय को बढ़ाने के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की महत्वाकांक्षी परियोजना 'फार्मर फर्स्ट' के अंतर्गत भाकृअनुप-काजरी जोधपुर के वैज्ञानिकों द्वारा वैज्ञानिक तरीके से ऑयस्टर मशरूम उत्पादन का प्रशिक्षण जोधपुर जिले के पोपावास, राजवा, घंटियाला ग्राम के कुल 63 किसानों को दिया है। प्रशिक्षण उपरांत मशरूम का उत्पादन शुरू किया गया, जिसे प्राप्त आंकड़ों के आधार पर एक किलो भूसे से औसतन 690 ग्राम मशरूम प्राप्त हुआ। मशरूम उत्पादन में लाभ: लागत का अनुपात 2.43 प्राप्त हुआ। यह अन्य फसलों की तुलना में अधिक है व इसमें जोखिम भी कम है। ■

प्याज भंडारण की समस्या एवं समाधान

प्रेम नारायण*

भारत में प्याज एक महत्वपूर्ण सब्जी फसल है। इसे सलाद एवं रसोई में मसाले के रूप में प्रयोग किया जाता है। भारत, चीन के बाद दुनिया में प्याज का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक देश है। इसके बाद अमेरिका, ईरान, मिस्र एवं रूस प्रमुख देश हैं। प्याज की कीमत में वृद्धि से उपभोक्ताओं का खाद्य उपभोग बजट प्रभावित होता है, जबकि अधिक उत्पादन होने पर खेती की लागत से नीचे प्याज की कीमतों में कमी से किसानों को हानि उठानी पड़ती है। अतः प्याज की पर्याप्त और उचित भंडारण सुविधा उपलब्ध होना अति आवश्यक है। यह किसानों को प्याज की आपात बिक्री की समस्या से निजात दिलाने के लिए आवश्यक है एवं उपभोक्ताओं को भी सही दामों पूरे वर्ष प्याज मिल सकता है।

भारत, प्याज का निर्यातक देश है। वर्ष 2001-02 में प्याज उत्पादन में 5252 हजार टन की जबरदस्त वृद्धि दर्ज की गयी। इससे किसानों को लाभ हुआ। वर्ष 2016-17 के दौरान प्याज की कीमतों में अचानक उछाल के कारण प्याज का निर्यात बढ़कर 3493 हजार टन हुआ और 4651.73 करोड़ रुपये मूल्य की विदेशी मुद्रा अर्जित की गयी। वर्ष 2017-18 में देश में प्याज का क्षेत्रफल 1285 हजार हैक्टर एवं उत्पादन 23262 हजार टन एवं उत्पादकता 18.10 टन प्रति हैक्टर दर्ज की गयी।

पर्याप्त और उचित भंडारण सुविधा की कमी एक बड़ी समस्या है, जो किसानों को प्याज की आपात बिक्री के लिए विवश करती है। वर्तमान भंडारण क्षमता अपर्याप्त है और अमूमन अवैज्ञानिक तौर-तरीके से संचालित है, उसका नुकसान किसानों एवं उपभोक्ताओं दोनों को उठाना पड़ता है। किसानों की फसल नष्ट हो जाने से व्यापारी प्याज के दाम बहुत बढ़ा देते हैं, जो उपभोक्ताओं के घरेलू बजट को बिगाड़ देता है।

तैयार प्याज की फसल

भारत मुख्यतः प्याज की तीनों किस्मों-लाल, पीला और सफेद का उत्पादन करता है। देश के उत्तरी भाग में, प्याज आमतौर पर सर्दियों (रबी) के मौसम में उगाया जाता है, जबकि दक्षिणी और पश्चिमी राज्यों-आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु, गुजरात और महाराष्ट्र में, यह सर्दियों (रबी) और साथ ही बारिश (खरीफ) के मौसम में भी उगाया

*मुख्य तकनीकी अधिकारी, भाकृअनुप-राष्ट्रीय कृषि अर्थशास्त्र एवं नीति अनुसंधान संस्थान, डी.पी.एस. रोड, पूसा, नई दिल्ली-110012

प्याज भंडारण में नुकसान की सीमा

अधिकतर ताजा फल-सब्जियों में 70-90 प्रतिशत तक नमी होती है, जबकि कटाई के बाद प्याज में उच्च प्रारंभिक नमी की मात्रा 88 प्रतिशत होती है। प्याज आमतौर पर चार से छह महीने की अवधि के लिये कोल्ड स्टोर में मई से नवंबर तक रखा जाता है। हालांकि 50-90 प्रतिशत भंडारण नुकसान जीनोटाइप और भंडारण की परिस्थितियों के आधार पर देखा गया है। कुल भंडारण नुकसान में वजन (पीएलडब्ल्यू) का दैनिक नुकसान शामिल है जैसे कि नमी की कमी और सिकुड़न (30-40 प्रतिशत), परिवहन हानि (20-30 प्रतिशत) और अंकुरण (20-40 प्रतिशत)। सही समय पर प्याज की कटाई और उसे रोगमुक्त रखने के बाद वांछित तापमान और आर्द्रता की अवस्था में रखने से वजन के नुकसान (पीएलडब्ल्यू) को कम किया जा सकता है। आमतौर पर सड़न के कारण नुकसान विशेष रूप से जून और जुलाई में भंडारण के प्रारंभिक महीने में चरम पर होता है। उच्च नमी के साथ मिलकर उच्च तापमान नुकसान का कारण बनता है। प्याज के उचित श्रेणीकरण और गुणवत्ता एवं अच्छे वेंटिलेशन की स्थिति में सड़न के कारण होने वाले नुकसान को कम कर सकते हैं।

भंडारित प्याज

जाता है एवं आपूर्ति पूरे वर्ष उपलब्ध रहती है। वर्तमान में, खरीफ में प्याज की खेती देश के उत्तरी भाग में बढ़ रही है। हमारे देश में प्याज की अपर्याप्त भंडारण सुविधा एवं बेमौसम बरसात के कारण 30-40 प्रतिशत प्याज सड़ जाता है।

देश में प्याज भंडारण गोदाम की स्थिति और क्षमता

वर्तमान में प्याज भंडारण की क्षमता लगभग 4.6 लाख टन है। यह हमारी कुल उत्पादन क्षमता (232.62 लाख टन) की तुलना में बहुत कम है। यहां तक कि अधिकांश मौजूदा गोदामों में पारंपरिक और अवैज्ञानिक तौर-तरीकों का प्रयोग अभी भी जारी है।

प्याज भंडारण एवं तकनीक

भंडारण प्रौद्योगिकी का उद्देश्य प्याज को लंबे समय तक शेल्फ जीवन के साथ एक अपरिवर्तित हालत में यथासम्भव लंबे समय के लिए रखना है। नियंत्रित तापमान और आर्द्रता प्रणाली के भौतिक सिद्धांतों का उपयोग कर लंबे समय तक निष्क्रिय हालत और उपयुक्त स्थिति प्रदान की जा सकती है। यह रोग के विकास के लिए प्रतिकूल है। इसके अलावा इस प्रक्रिया में आर्थिक और तकनीकी बाधाओं को देखना पड़ेगा। इसके लिए दो बुनियादी रणनीतियों पर ध्यान देना होगा जैसे प्याज भंडारण तापमान को 25-30 डिग्री सेल्सियस के आसपास रखना और उच्च तापमान की प्रसुप्तावस्था में रखने की जरूरत है। फिजियोलजिकल और पैथोलोजिकल प्रक्रिया के कारण भंडारण में प्याज का सम्पर्क ऊष्मा और जल वाष्प की भौतिक प्रक्रिया से होता है, जिससे भंडारण कक्ष का वातावरण प्रभावित होता है। अंकुरण में वृद्धि होने से श्वसन दर बढ़ जाती है एवं श्वसन में वृद्धि के कारण प्याज से ऊष्मा, कार्बनडाइऑक्साइड और पानी की कमी को बढ़ाता है। भंडारण कक्ष में रोग तब विकसित होते हैं, जब वहां उसके अनुकूल परिस्थितियां हों। इस प्रकार प्याज खराब हो जाते हैं एवं रोगों के कारण प्याज की गुणवत्ता में गिरावट से श्वसन आउटपुट में वृद्धि हो जाती है।

नगदी फसल है प्याज

प्याज के लिए सापेक्ष आर्द्रता 65-70 प्रतिशत छिलके को पूर्ण रूप से लचीला और लोचदार बनाए रखने के लिए वांछनीय है। कम सापेक्ष आर्द्रता में छिलका बहुत नाजुक हो जाता है और विशेष रूप से जब छिलके की नमी 20 प्रतिशत से नीचे गिर जाती है, तो छिलका बहुत पतला होकर आसानी से टूट जाता है। सापेक्ष आर्द्रता 67-70 प्रतिशत के बीच नमी बनाए रखने के लिए वेंटिलेशन की जरूरत होती है। पानी की कमी और श्वसन में वृद्धि से गुणवत्ता और मात्रा पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। प्याज द्वारा उत्पादित ऊष्मा को नष्ट करने के लिए वेंटिलेशन की जरूरत होती है। समय के

प्याज उपयोग का महत्व

प्याज की मांग उपभोक्ताओं में पूरे विश्व में वर्षभर बनी रहती है। इसमें तीखापन सल्फर यौगिकों की उपस्थिति के कारण होता है। प्याज विशेषकर रसोई में मसाले के रूप में, सब्जी और सलाद के रूप में दैनिक उपयोग किया जाता है। इसमें एंटीऑक्सीडेंट एवं अन्य रसायन यौगिक पाये जाते हैं। ये शरीर में सूजन, अट्राइग्लिसराइड्स एवं कोलेस्ट्रॉल के स्तर को कम करते हैं, जिससे हृदय रोग का खतरा कम हो सकता है। प्याज में विभिन्न विटामिन, खनिज और यौगिक पाये जाते हैं, जो शरीर के लिए कई तरह से स्वास्थ्यप्रद होते हैं। वास्तव में प्याज, औषधीय गुणों का भंडार है।

प्याज की वर्षभर रहती है मांग

साथ इसके लिए वेंटिलेशन की आवश्यकता को भी बढ़ाना होगा।

प्याज भंडारण के तकनीकी पहलू

अनुकूलतम तापमान 25 से 30 डिग्री सेल्सियस के साथ 65 से 70 प्रतिशत के बीच आर्द्रता की रेंज बनाए रखने पर प्याज भंडारण का वेंटिलेशन काफी सन्तोषजनक रहता है। यह वातावरण भंडारण के होने वाले नुकसान जैसे-सड़न, अंकुरण और वजन के रूप में फिजियोलोजिकल नुकसान करता है। प्याज भंडारण गोदाम उत्तर-दक्षिण की ओर उन्मुख होना चाहिए और उसकी लंबाई का मुख पूर्व-पश्चिम दिशा की ओर होना चाहिए। छिद्रित सतह के साथ नीचे और किनारों के वेंटिलेशन के साथ 0.60 मीटर की ऊंचाई तक का भंडारण होगा। 80 प्रतिशत तक खुले किनारों के साथ 60 सें.मी. जमीन से ऊपर भंडारण होना चाहिए। वेंटिलेशन भंडारण के तहत भंडारण की ऊंचाई 90 सें.मी. से 150 सें.मी. होनी चाहिए।

25 मीट्रिक टन प्याज भंडारण के लिए उपयुक्त आकार

प्याज भंडारण के लिए 25 मीट्रिक टन मात्रा के लिए भंडारण क्षेत्र का आकार 4.5 मीटर×6.0 मीटर होना चाहिए। भंडारण कक्ष की चौड़ाई स्थानीय निर्माण सामग्री और परिवेश दशा की उपलब्धता के आधार पर कम की जा सकती है। भंडारण गोदाम की लंबाई को व्यक्तिगत आवश्यकताओं के अनुकूल बढ़ाया जा सकता है। धूप और बारिश से उत्पाद की रक्षा करने के लिए विंडवार्ड के ऊपर कम से कम 1.5 मीटर और अन्य सभी किनारों में 0.5 मीटर का छज्जा बनाना चाहिए। 25 मीट्रिक टन के गोदाम का कुल आयाम 6.5 मीटर × 7.0 मीटर होना चाहिए। इस आयाम को क्षमता और साइट की स्थिति के आधार पर समायोजित किया जा सकता है। किनारों की दीवारें भी चेनलिंक (जीआई तार) के प्रकार की हो सकती हैं। ऐसा देखा गया है कि प्रति मीट्रिक टन रुपये 150 से 200 रुपये के बीच निवेश लागत से इस तरह के गोदामों का निर्माण किया जा सकता है। इसलिए, पर्याप्त देखभाल से गोदामों द्वारा पूरा लाभ उठाया जा सकता है।

प्याज भंडारण की तैयारी

राज्य एवं केंद्र सरकार द्वारा प्याज भंडारण के लिए अनुदान का प्रावधान

सरकार ने राष्ट्रीय कृषि विकास योजना (आरकेवीवाई) 2019-20 के तहत कमोडिटी के भंडारण के लिए किसानों को प्याज गोदाम विकसित करने के लिए 60 करोड़ का अनुदान आवंटित किया है। केंद्र सरकार की योजना राज्य में भंडारण सुविधाओं को बढ़ाने के उद्देश्य से है, ताकि किसानों को अपनी उपज को संकट में बेचने और जिंस को बनाए रखने के लिए मजबूर न किया जाए, जब तक कि बाजार की स्थिति में सुधार न हो।

पॉपलर के साथ शिमला मिर्च की खेती

पूजा किशोर*, **समीर डेनियल**** और **अनुकूल प्रकाश अनुराग*****

पॉपलर एक तेजी से बढ़ने वाला बारहमासी पेड़ है, जिसमें उच्च कार्बनडाइऑक्साइड विनिमय दर और पानी की कम खपत होती है। पॉपलर को हवा की गति को कम करने के लिए उत्तम माना गया है। भारत के उत्तरी भाग में कृषि वानिकी प्रणाली के तहत इसे लगाए जाने पर किसानों की आर्थिक स्थिति में सुधार हो सकता है। इसके द्वारा वातावरण में पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने में भी मदद मिलती है। कृषि वानिकी प्रणाली द्वारा एक हैक्टर क्षेत्रफल में पॉपलर के 425 पौधे लगाए जाते हैं, जिनकी कीमत 5 से 6 वर्षों के बाद लगभग 5 लाख रुपये हो जाती है।

भारत में वन क्षेत्र लगभग 7,12,249 वर्ग कि.मी. में फैला हुआ है, जो कि कुल भौगोलिक क्षेत्र का 21.67 प्रतिशत है। देश में कृषि वानिकी प्रणाली आमतौर पर जम्मू-कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, सिक्किम और अरुणाचल प्रदेश में की जाती है। इस प्रणाली में कृषि और वानिकी का संयोजन किया जाता है। इसमें वर्षभर कुछ न कुछ उपज ली जा सकती है जैसे कि सब्जी, हरी खाद, चारा आदि जिसे सालाना फसलचक्र को ध्यान में रखकर लगाया जाता है। इस प्रणाली में घटकों का चयन एक-दूसरे के पूरक के रूप में किया जाना महत्वपूर्ण है, ताकि विभिन्न फसलों और पेड़ों के बीच प्रतिस्पर्धा से बचा जा सके।

एक ही इकाई में लकड़ी के साथ-साथ विभिन्न फसलों एवं पशुपालन को एकीकृत ढंग से उपजाने से किसान को सामाजिक एवं आर्थिक फायदा हो सकता है। वर्तमान में पृथ्वी पर केवल 22 प्रतिशत जमीन को कृषि उद्देश्यों के लिए उपयोग में लाया जा रहा है, जिसमें 13 प्रतिशत जमीन की उत्पादक क्षमता बहुत ही कम है, 6 प्रतिशत मध्यम उत्पादकता की श्रेणी में हैं और केवल 3 प्रतिशत जमीन ही उच्च उत्पादक क्षमता की श्रेणी में आती है। अपने देश की बढ़ती आबादी की खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए आने वाले वर्षों में कृषि भूमि की उत्पादकता बढ़ाने का भार बढ़ेगा। इसलिए देश के उत्तरी राज्यों में इस प्रणाली को अपनाकर पर्यावरण एवं कृषकों दोनों के हितों की सुरक्षा की जा सकती है।

पॉपलर की मुख्य विशेषताएं

- तेज विकास दर और कृषि फसलों के साथ अनुकूलनशीलता।
- पल्प, पैकिंग, बक्से, डंडे, बोर्ड, प्लाइवुड और अन्य उद्योगों में इसकी अधिक मांग।
- कार्बन अनुक्रम के लिए उपयोग में लाया जाता है।
- फोटोरेमेडियेशन अर्थात दूषित मृदा, हवा और पानी को साफ करता है।
- खेतों से नाइट्रेट प्रदूषकों का अवशोषण।
- खेत से लवणता को कम करता है।
- इसके पूर्ण विकास में बहुत ही कम अवधि (6-8 वर्ष) लगती है।

*पीएचडी (शोध छात्र); **सहायक प्राध्यापक, सैम हिगिनबॉटम कृषि प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, प्रयागराज-211007 (उत्तर प्रदेश); ***एसआरएफ, भूमि एवं जल प्रबंधन प्रभाग, भाकृअनुप का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना-800014 (बिहार)

सारणी 1. उत्तर भारत में पॉपलर खेती के लिए मुख्य बिन्दु

जीवन काल	5 से 7 वर्ष
प्रजाति	जी-48
पंक्ति से पंक्ति की दूरी	9 मीटर
पौधे से पौधे की दूरी	3 मीटर
प्रति हैक्टर पौधों की संख्या	425
मृदा	कार्बनिक पदार्थों से समृद्ध दोमट मृदा
बुआई का समय	जनवरी और फरवरी
वर्षा	750-800 मि. मी.
बुआई के समय तापमान	18-20 डिग्री सेल्सियस
कटाई के समय तापमान	10-45 डिग्री सेल्सियस

सारणी 2. शिमला मिर्च की खेती के दौरान कुछ मुख्य बातों का ध्यान

मौसम	रबी और खरीफ
मृदा	कार्बनिक पदार्थों से भरपूर दोमट मृदा
बुआई का समय	सितंबर-फरवरी
जैविक उर्वरक	20 से 25 टन प्रति हैक्टर
वर्मीकम्पोस्ट	40 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर
पोल्ट्री खाद	2.5 टन प्रति हैक्टर
बीज की किस्म	नेपच्यून एफ 1 हाइब्रिड
बीज की कीमत	900 से 1450 रुपये प्रति 10 ग्राम
सिंचाई	साप्ताहिक या 10 दिनों के अंतराल पर
दूरी	40 सें.मी. (पौधे से पौधे) 30 सें.मी. (पंक्ति से पंक्ति)
पौधे का जीवन काल	5 से 6 महीने
निराई	30 और 60 दिनों के बाद
फफूंदी से बचाव	गीले सल्फर का छिड़काव 2 ग्राम प्रति लीटर
डाइबैक और फ्रूट रॉट से बचाव	मैन्कोजेब का छिड़काव 2 ग्राम प्रति लीटर

कृषि वानिकी सह बागवानी प्रणाली

पॉपलर पर्यावरण के अनुकूल होता है और कृषि वानिकी प्रणाली में उपजाने के लिए बहुत उत्तम है। शिमला मिर्च कम अवधि की बहुत ही लाभदायक सब्जी है, जिसकी खेती रबी और खरीफ दोनों मौसमों में की जा सकती है। सैम हिगिनबॉटम कृषि प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, प्रयागराज के वानिकी विभाग के फार्म में वर्ष 2017-2018 में पॉपलर आधारित कृषि वानिकी प्रणाली में शिमला मिर्च लगायी गई, जिसके परिणाम अच्छे थे।

शिमला मिर्च की खेती से बढ़ाएं आमदनी

सारणी 3 पॉपलर आधारित कृषि वानिकी प्रणाली में शिमला मिर्च में लागत एवं आय

शिमला मिर्च*	प्रति सीजन (प्रति हैक्टर)	वार्षिक (प्रति हैक्टर)
खेत तैयार करने में लागत	7000 रुपये	14000 रुपये
नर्सरी की तैयारी और रोपाई खर्च	4000 रुपये	8000 रुपये
बीज की लागत (एक हैक्टर के लिए 200 ग्राम) (900 रुपये प्रति 10 ग्राम)	18000 रुपये	36000 रुपये
छिड़काव, निराई और गुड़ाई की लागत	6000 रुपये	12000 रुपये
सिंचाई का खर्च	10000 रुपये	20000 रुपये
कुल लागत	45,000 रुपये	90,000 रुपये
पॉपलर आधारित कृषि वानिकी प्रणाली में शिमला मिर्च की उत्पादकता	20.5 टन	41 टन
कुल विक्रय मूल्य (15 रुपये प्रति कि.ग्रा.)	307500 रुपये	6,15,000 रुपये
लाभ	262500 रुपये	5,25,000 रुपये
पॉपलर* (5 से 6 वर्षों के लिए)		
लाभ (प्रति वर्ष)	-	75,000-80,000 रुपये

*अनुमानित मूल्य

पॉपलर रोपण की विधि

पॉपलर प्रतिवर्ष 20-25 मीटर प्रति हैक्टर की दर से तेजी से बढ़ता है। आमतौर पर इसके बीज को 22 सें.मी. लंबे और 1-3 सें.मी. व्यास के गड्ढे में लगाया जाता है। पॉपलर लगाने के लिए कुछ मुख्य बातों का ध्यान रखना पड़ता है, जो सारणी-1 में उल्लेखित हैं।

शिमला मिर्च की खेती

शिमला मिर्च की नर्सरी तैयार की जाती है और जब पौधे 8 से 10 सें.मी. के हो जाते हैं, फिर इसे तैयार खेत में लगाया जाता है। यह तीन रंगों-लाल, हरे और पीले रंग की होती है। भारत में अधिकतर हरे रंग की शिमला मिर्च की खेती की जाती है। खुले खेत में इसकी पैदावार 20 से 40 टन प्रति हैक्टर एवं पॉलीहाउस और ग्रीनहाउस में इसकी उपज 80 से 100 टन प्रति हैक्टर तक होती है। इसकी खेती मुख्यत: उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश और तमिलनाडु में की जाती है। इसका उपयोग विभिन्न व्यंजन और छोटे उद्योग में अचार बनाने में किया जाता है। हाल के दिनों में पीली और लाल रंग की शिमला मिर्च की मांग शहरी रेस्तराओं में बढ़ी है, जिसकी अच्छी कीमत किसानों को मिल रही है।

पॉपलर की खेती लकड़ी, ईंधन और चारे की मांग को पूरा करने के लिए की जाती है। इसने प्लाईवुड उद्योग के विकास में मदद की है। अध्ययनों में पता चला है कि पॉपलर के साथ कृषि फसलें अधिक संगत हैं। पॉपलर आधारित कृषि वानिकी प्रणाली में शिमला मिर्च की खेती से सालाना लगभग 5.50 लाख रुपये तक आमदनी और पॉपलर की कीमत लगभग 75,000-80,000 रुपये प्रतिवर्ष प्रति हैक्टर की दर से बढ़ती है। इसके उत्पादन से कृषकों की आर्थिक स्थिति में सुधार हो सकता है।

अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में बाग की स्थापना

राज कुमार*, कनक लता*, बी.एस. खद्दा*, ए.के. राय* और **एस. खजुरिया***

भारत के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल (329 मिलियन हैक्टर) का 131 मिलियन हैक्टर (37 प्रतिशत) अर्द्धशुष्क जलवायु के अंतर्गत आता है। अर्द्धशुष्क क्षेत्रफल मुख्य रूप से उत्तर-पश्चिमी भारत में तथा कुछ भाग दक्षिणी भारत में फैला हुआ है। भारत में सबसे ज्यादा अर्द्धशुष्क परिस्थितियां महाराष्ट्र (19 प्रतिशत), कर्नाटक (15 प्रतिशत), आंध्र प्रदेश (15 प्रतिशत), राजस्थान (13 प्रतिशत), गुजरात (9.50 प्रतिशत), तमिलनाडु (10 प्रतिशत), उत्तर प्रदेश (7 प्रतिशत) एवं मध्य प्रदेश (6 प्रतिशत) में हैं। अर्द्ध शुष्क क्षेत्रों की मुख्य समस्याएं जैसे-नमी की कमी, खराब मृदा और पानी की गुणवत्ता आदि हैं। इन क्षेत्रों में वार्षिक वर्षा 300-750 मि.मी. तथा कुल वाष्पीकरण 2-3 गुना ज्यादा होता है। गर्मी के महीनों (मई-जून) में अत्यधिक गर्मी के साथ तापमान 44 से 50 डिग्री सेल्सियस तक हो जाता है। इन क्षेत्रों के लिए उपयुक्त फलदार पौधे अजैविक तनाव के प्रति सहिष्णु होने चहिये।

अर्द्धशुष्क क्षेत्रों के लिए फलदार पौधे और उनकी किस्मों का चयन बहुत ही महत्वपूर्ण विषय है। इनका चुनाव करते समय निम्न बातों को ध्यान में रखना चाहिये:

- पौधे गहरी जड़ों वाले होने चाहिए
- गर्मियों के दौरान सुषुप्तावस्था में रहने चाहिए
- कम पानी से अच्छी गुणवत्ता वाले फलों का उत्पादन दे सकें
- मानसून की बारिश के बाद फूल व फल लगने वाले होने चाहिए
- लवणता और क्षारीयता के प्रतिरोधी होने चाहिए।

अर्द्धशुष्क क्षेत्रों के लिए उपयुक्त फलदार पौधे और उनकी किस्में सारणी-1 में दर्शाई गयी हैं।

प्रवर्धन

फलदार पौधों का प्रवर्धन बीज व कायिक, दोनों विधियों से, किया जा सकता है। बीज से प्रवर्धन करने से फलन में ज्यादा समय (7-10 वर्ष), पेड़ की लंबाई ज्यादा, जिससे फल की तुड़ाई करने में मुश्किल होती है, उत्पादन कम व फल निम्न गुणवत्ता

*भाकृअनुप-कृषि विज्ञान केन्द्र-पंचमहल-389340, गुजरात (भाकृअनुप-केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान)

वाले होते है। जबकि कायिक विधि से प्रवर्धन करने से फलन में कम समय (3-4 वर्ष) लगता है। पेड़ की लंबाई कम होती है। इससे दवाइयों के छिड़काव और फलों की तुड़ाई करने में आसानी रहती है। फल उत्पादन ज्यादा व उच्च गुणवत्ता वाला होता है। अत: कायिक विधि से प्रवर्धन करना चाहिये। अर्द्धशुष्क क्षेत्रों के फलदार पौधों की प्रवर्धन विधि, उचित समय व रोपण दूरी सारणी-2 में दी गई है।

फलदार पौधों को खरीदते समय निम्नलिखित बिंदुओं को ध्यान में रखना चाहिए:

- विश्वसनीय स्रोत से ही पौधे खरीदने चाहिए।
- क्षेत्र विशेष के अनुसार उचित किस्म का चुनाव करना चाहिए।
- पौधे अलैंगिक विधि से व उचित विधि से तैयार होने चाहिए।
- पौधे स्वस्थ होने चाहिए।
- पौधा एक वर्ष से ज्यादा उम्र का न हो।
- पौधे को टैग किया हुआ होना चाहिए।

बाग की स्थापना

बाग की स्थापना एक दीर्घकालीन निवेश है। इससे जुड़े हुये मुद्दे जैसे-उचित स्थान का चुनाव करना, पौधों को उचित दूरी पर लगाना, सही रोपण प्रणाली का उपयोग करना इत्यादि पर सावधानी से विचार कर निर्णय लेना चहिए।

अंत:सस्य

बागों में अंत:सस्य एक प्रभावी आर्थिक विकल्प है, खासकर जब बाग से पैसा नहीं मिल रहा होता है। फलों के पेड़ 4-5 वर्ष की उम्र से फलने लगते हैं। बगीचे में अल्प अवधि की सब्जियां (टमाटर, बैंगन, मिर्च, भिन्डी, फूलगोभी, ककड़ी व फसलें (सरसों, तिल, चना, मूंग, मोठ) और फलदार पौधे (पपीता और फालसा) उगाए जा सकते हैं।

पौधशाला पर प्रशिक्षण कार्यक्रम

बाग रेखांकन पर प्रशिक्षण कार्यक्रम

स्थान का चयन

बाग लगाने से पहले उचित स्थान और साइट का चयन करना बहुत ही महत्वपूर्ण विषयों में से एक है। निम्नलिखित मानदंडों को ध्यान में रखते हुये इसकी योजना बनानी चाहिये।

- चयनित स्थान फलदार पौधों की खेती के लिए प्रचलित होना चाहिए, जिससे उत्पादकों के अनुभवों का लाभ मिल सके। अन्य फल उत्पादकों के साथ सहकारी संगठनों के माध्यम से उपज बेचने का लाभ भी मिल सकता है।
- मृदा की उपयुक्तता का आकलन इसकी उर्वरता, सबसॉयल की प्रकृति और मृदा की गहराई से करना चाहिये।
- चयनित जगह में उचित जल निकास की सुविधा होनी चाहिये। मुख्य रूप से बरसात के मौसम में और पानी का ठहराव नहीं होना चाहिये।
- क्षेत्र बाजार के नजदीक होना चाहिए। उगाई जाने वाले फल व उनकी किस्मों की उचित मांग होनी चाहिये।
- चुने हुये फलों व उनकी किस्मों को उगाने के लिए मृदा व जलवायु उपयुक्त होनी चाहिये।
- वर्षभर उचित गुणवत्तायुक्त सिंचाई के लिए पर्याप्त जलापूर्ति होनी चाहिये।
- चयनित स्थान, यातायात के साधन जैसे-रेल व रोड से जुड़ा होना चाहिये।
- श्रमिकों की उपलब्धता होनी चहिये।
- जहां तक सम्भव हो स्थान मालिक के निवास के पास होना चाहिये।
- बागवानी से संबंधित इनपुट की उपलब्धता होनी चहिये।

रोपण प्रणाली और दूरी

रोपण के विभिन्न तरीके जैसे-वर्गाकार, आयताकार, क्विनक्स, षट्कोण, त्रिकोणीय, युग्मित पंक्ति प्रणाली हैं। सभी विधियों के गुण और अवगुण हैं, लेकिन शुष्क और अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में वर्गाकार और आयताकार प्रणालियों को मुख्य रूप से अपनाया जाता है। इन प्रणालियों का रेखांकन करना व अंत:सस्य क्रियायें (इंटरकल्चरल ऑपरेशन) करना आसान रहता है। विभिन्न फलदार पौधों के लिए रोपण दूरी सारणी-2 में बताई गई है।

गड्ढे तैयार करना और पौधे लगाना

चयनित भूमि से पेड़-पौधों को निकालकर समतल कर लेते हैं, जिससे उचित जल निकास हो सके। मुख्य रूप से बरसात के मौसम में पानी का ठहराव नहीं होना चाहिये। रोपण प्रणालियों और फसल की किस्मों के अनुसार उचित दूरी (सारणी-2) के हिसाब से लेआउट बना लेना चाहिए। निश्चित की हुई जगह पर अप्रैल में 1×1×1 मीटर आकार के गड्ढे खोद लेने चाहिए। गड्ढों को 15-20 दिनों के लिये खुला छोड़ना चाहिए, जिससे रोगजनकों और कीटों के इनोकुलम, अंडे, प्यूपा इत्यादि गर्मी से मर जायें। गड्ढों को 1/3 भाग खेत के ऊपर की मृदा व 3/4 भाग अच्छी तरह से सड़ी हुई गोबर की खाद (फार्म यार्ड खाद) और उर्वरकों

(एन-50 ग्राम, पी-100 ग्राम प्रति गड्ढे) के साथ मिलाकर भर देना चाहिए। गड्ढों की मृदा को कॉम्पैक्ट और व्यवस्थित हो जाने के बाद मानसून की पहली बरसात के बाद पौधों का रोपण करना चाहिए। सुनिश्चित सिंचाई सुविधा हो, तो रोपण फरवरी के दौरान भी किया जा सकता है।

स्व-स्थानिक कलिकायन (इन-सीटू बडिंग)

यह तकनीक अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में वर्षा आधारित बागवानी हेतु बहुत ही कारगर है। इस तकनीक में देसी बीज या पौधों को रेखांकित स्थानों पर लगा देते हैं। लगभग एक वर्ष बाद तैयार मूलवृन्त को 20-25 सें.मी. छोड़कर काट दिया जाता है। उचित प्रजाति, जो कि अधिक फल, अच्छी गुणवत्ता व कीट व रोगों से कम प्रभावित होती हो, से सांकुर डाली या आंख लेकर प्रवर्धन की उचित विधि से व सही समय पर कलिकायन या ग्रॉफ्टिंग करनी चाहिए। पंचमहल (गुजरात) के वातावरण में मध्य मई से जब तक बरसात शुरू न हो, तब तक 'पैच' बडिंग विधि, सॉफ्टवुड ग्रॉफ्टिंग से 80-100 प्रतिशत तक सफलता पाई जा सकती है। इस तकनीक से पौधे तैयार करने से पौधे खरीदने का खर्च बच जाता है, कम पौधे मरते हैं व पौधों में दो वर्ष में फल लगने लगते हैं।

आम के मूलवृंत

सारणी 1. अर्द्धशुष्क क्षेत्रों के लिए उपयुक्त फलदार पौधे और उनकी किस्में

क्र.स.	फल	किस्में
1	आम	केसर, राजापुरी, लंगड़ा, दशहरी, मल्लिका, हाफूस
2	चीकू	क्रिकेट बाल, काली पत्ती, भूरी पत्ती
3	आंवला	चकैया, बनारसी, एन.ए.-7, गोमा ऐश्वर्या, आनंद-2
4	बेर	गोला, गोमा कीर्ति, उमरान, थार सेविका, थार भूमिराज
5	बेल	गोमा यशी, थार नीलकंठ, थार दिव्य, सी.आई.एस.एच. बेल-1, एन.बी.-5, एन.बी.-9, पंत सुजाता, पंत उर्वशी, पंत अपर्णा
6	इमली	गोमा प्रतीक, पी.के. एम.-1
7	जामुन	गोमा प्रियंका, थार क्रांति, पारस, राय जामुन
8	अंजीर	पूना फीग, दिनोंकर, दियाना, एक्स्केल
9	लसोडा	थार बोल्ड, मरु समृद्धि, पुष्कर लोकल
10	शहतूत	थार लोहित, थार हरित, चाइना व्हाइट
11	करौंदा	थार कमल, पंत मनोहर, पंत सुदर्शन, पंत स्वर्ण, कोंकण बोल्ड
12	खिरनी	थार ऋतुराज
13	फालसा	थार प्रगति
14	महुआ	थार मधु, एन. एम.-2, एन. एम.-4, एन. एम.-7, एन. एम.-9
15	चिरौंजी	थार प्रिया
16	अंजीर	दियां, दिनोकर, पूना फीग,
17	कैंथ	थार गौरव
18	मनीला टमारिंड	पी.के.एम.-1

सारणी 2. अर्द्धशुष्क क्षेत्रों के फलदार पौधों की प्रवर्धन विधि, उचित समय व रोपण दूरी

क्र.सं.	फल	प्रवर्धन विधि	उचित समय	रोपण दूरी (मीटर)
1	आम	सॉफ्टवुड ग्राफ्टिंग	अक्टूबर-नवंबर	8×8, 8×6
2	चीकू	सॉफ्टवुड ग्राफ्टिंग	फरवरी-मार्च	8×8
3	आंवला	पैच बडिंग	मई-जून	8×8, 8×6
4	बेर	पैच बडिंग	मई-जून	8×8, 8×6,
5	बेल	सॉफ्टवुड ग्राफ्टिंग, पैच बडिंग	मई-जून	5×5, 8×6
6	इमली	सॉफ्टवुड ग्राफ्टिंग, पैच बडिंग	जुलाई-अगस्त	8×8, 5×5
7	जामुन	सॉफ्टवुड ग्राफ्टिंग, पैच बडिंग	अप्रैल-मई	6×6, 5×5
8	अंजीर	कटिंग और पैच बडिंग	जुलाई-फरवरी	8×6
9	लसोडा	पैच बडिंग, क्लेफ्ट ग्राफ्टिंग	अप्रैल-मई	8×6
10	शहतूत	कटिंग	फरवरी-मार्च	8×6, 5×5
11	करौंदा	कटिंग, बीज	जून-जुलाई	4×4, 4×2
12	सीताफल	सॉफ्टवुड ग्राफ्टिंग	अप्रैल-मई	8×6, 5×5
13	खिरनी	सॉफ्टवुड ग्राफ्टिंग	अप्रैल-मई	5×5
14	फालसा	सेमी हार्ड वुड कटिंग, बीज	दिसंबर-जनवरी	4×2, 2×2
15	महुआ	सॉफ्टवुड ग्राफ्टिंग	मार्च-अप्रैल	6×6, 5×5
16	चिरौंजी	सॉफ्टवुड ग्राफ्टिंग	जुलाई-अगस्त	6×6, 5×5
17	कैंथ	सॉफ्टवुड ग्राफ्टिंग, पैच बडिंग	अप्रैल-जून	6×6, 5×5
18	मनीला टमारिंड	पैच बडिंग	मई-जून	8×8, 5×5
19	ताड़	सकर्स, बीज	जुलाई-अगस्त	4×4

रोपण

पौधे ठीक उसी जगह लगाने चहिये जिस स्थान पर रेखांकन करते समय डंडे खड़े किये हुये हों या चूने से निशान लगाये गये थे। पौधों की पॉलीथीन को ब्लेड या चाकू की सहायता से काटकर पिंडी को अलग कर चिन्हित स्थान पर ग्रॉफ्टिंग और बडिंग के चिन्ह को जमीन से 15-20 सें.मी. ऊपर रखते हुये रोपण करते हैं। इसे प्लांटिंग बोर्ड की मदद से भी आसानी से किया जा सकता है।

पोषक तत्व प्रबंधन

पौधों की बढ़वार, फूलने व फलने के लिए सभी 18 पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। पौधों में खाद व उर्वरक की मात्रा पौधे की किस्म, आयु, मृदा की गुणवत्ता, सिंचाई की सुविधा, मृदा जांच इत्यादि के आधार पर विभिन्न संस्थानों की सिफारिश के अनुसार उचित मात्रा, उचित समय और सही विधि से देनी चाहिए। फल वृक्षों में पेड़ के फैलाव तक 1.0-1.5 फीट चौड़ी व 1.0 फीट गहरी खाई खोदकर खाद व उर्वरकों की पूरी मात्रा मानसून की पहली बरसात के बाद भरकर मृदा से ढक देना चाहिये।

अरबी से स्वास्थ्य एवं खाद्य सुरक्षा

अर्चना करेल*

विकासशील देश एशिया, अफ्रीका और मध्य अमेरिका में अरबी का प्रमुख उपयोग भोजन के रूप में लाखों लोगों द्वारा किया जाता है। अरबी के पौधे (कोलोकैसिया एस्कुलेंटा) की पत्तियां दिल के आकार की होती हैं। इसको आमतौर पर उपोष्णकटिबंधीय और उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में उगाया जाता है। ये हरी पत्तियां, आकार में बड़ी होती हैं और अक्सर इन्हें हाथी के कान के रूप में वर्णित किया जाता है। यह एक जड़ी-बूटी वाला पौधा है, जो 1-2 मीटर की ऊंचाई तक बढ़ता है। पत्ते और कंद खाने योग्य हिस्सा हैं, जिन्हें आसानी से पचाया जा सकता है। इसके कंद स्टार्च के महत्वपूर्ण स्रोत हैं। ताजे अरबी के पत्तों (हरी किस्म) में नमी 82.7 ग्राम, प्रोटीन 3.9 ग्राम, वसा 1.5 ग्राम, खनिज 2.2 ग्राम, क्रूड फाइबर 2.9 ग्राम, कार्बोहाइड्रेट 6.8 ग्राम, ऊर्जा 56 किलो कैलोरी, कैल्शियम 227 मि.ग्रा., फॉस्फोरस 82 मि.ग्रा., आयरन 10 मि.ग्रा., विटामिन 'सी' 12 मि.ग्रा., तांबा 0.18 मि.ग्रा. की उपलब्धता होती है।

अरबी, अलग-अलग शाब्दिक नाम अंग्रेजी में टैरो, हिंदी में अरबी, संस्कृत में अलुपम, गुजराती में अलवी, मराठी में अलु और तमिल में सेमपु के रूप में प्रचलित है। प्राचीन समय से इसे गुणकारी जड़ी-बूटी के रूप में जाना जाता है। इसका उपयोग विभिन्न रोगों जैसे-अस्थमा, गठिया, दस्त, तंत्रिका संबंधी विकार व त्वचा विकारों के उपचार में किया जाता है। अरबी की पत्तियों और कंद का कच्चा सेवन स्वास्थ्य के लिए जहरीले पाए गए हैं। इसमें तीखा कैल्शियम ऑक्सालेट मौजूद होता है, जिसे पहले गर्म करने की विधि द्वारा नष्ट किया जा सकता है। पत्ती के डंठल और परिपक्व पत्तियों को सब्जी के रूप में भी खाया जाता है।

पोषण गुणवत्ता और रासायनिक संरचना

अरबी सुपाच्य कार्बोहाइड्रेट और सूक्ष्म पोषक तत्वों व खनिजों का एक अच्छा स्रोत माना जाता है। विशेष रूप से पोटेशियम और विटामिन (बी-कॉम्प्लेक्स)। इसकी पत्तियां प्रोटीन (23 प्रतिशत) से भरपूर होती हैं। सूखे वजन के आधार पर अरबी में लगभग 11 प्रतिशत प्रोटीन होता है। आवश्यक अमीनो अम्ल मेथीयोनीन, लाइसिन, सिस्टीन, फेनिलएलनिन और ल्यूसीन कंद की तुलना में पत्ती में अपेक्षाकृत प्रचुर मात्रा में होते हैं। पोषक तत्वों में, जड़ों और कंद में कार्बोहाइड्रेट के रूप में, आहार ऊर्जा के किफायती स्रोत प्रदान करने की एक बड़ी क्षमता है। उच्च

अरबी का पोषण महत्व

अरबी के कंद में प्रोटीन (1.5 प्रतिशत) और वसा (0.2 प्रतिशत) अपेक्षाकृत कम होते हैं और यह कई अन्य कंदीय फसलों के समान है। यह स्टार्च (70 से 80 ग्राम/100 ग्राम सूखी अरबी), फाइबर (0.8 प्रतिशत) और राख (1.2 प्रतिशत) का एक अच्छा स्रोत है। अरबी में थायमीन, राइबोफ्लेविन, लोहा, फॉस्फोरस और जस्ता भी मिलता है। यह विटामिन बी$_6$, सी, नियासिन, पोटेशियम, तांबा और मैंगनीज का भी उत्तम स्रोत है। उदाहरण के लिए, एशिया/प्रशांत क्षेत्रों में, पत्तियों को आमतौर पर अन्य सुगंधित जड़ी-बूटियों के साथ मिश्रित तरीके से तैयार किया जाता है। इसे नगदी फसल के रूप में विदेशी मुद्रा अर्जित करने और एक आय माध्यम के रूप में भी ग्रामीण विकास के लिए उपयोग किया जा सकता है।

अरबी के पत्ते

*प्रोजेक्ट फैलो, क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान, अजमेर (राजस्थान)

कार्बोहाइड्रेट (87 प्रतिशत) के साथ पूरक हो सकती है। यह मानव भोजन के स्रोत के रूप में पौधे के कंद भाग में पाई जाती है। कंद में उच्च नमी की मात्रा के कारण इसमें ऊर्जा लगभग एक-तिहाई चावल या गेहूं के बराबर होती है। अरबी कंद अपनी उच्च नमी के परिणामस्वरूप तेजी से खराब होता है, लेकिन इसे एक छायादार क्षेत्र में संग्रहित किया गया हो तो एक महीने का शेल्फ जीवन हो सकता है।

फेनोलिक एसिड

अरबी के कंद स्टार्च से भरपूर होते हैं और इनमें एंथोसायनिन एवं सायनाइडिन 3-ग्लूकोसाइड होते हैं। इसे फ्लेवोनोइड के साथ आमतौर पर, संबंधित एंथोसायनिन को दृष्टि में सुधार करने के लिए कोशिका की नाजुकता को कम करके रक्त परिसंचरण में सुधार करने, शक्तिशाली एंटीऑक्सीडेंट के रूप में कार्य करने और मानव कैंसर कोशिका विकास को बाधित करने के लिए प्रयोग जाना जाता है।

पोषण से भरपूर अरबी

अरबी प्रसंस्करण

अरबी पकाने के पारंपरिक तरीकों में पत्थरों पर भूनना या ग्राउंड ओवन में सेंकना आदि। आधुनिक तरीके में ओवन में उबालना और भाप में पकाना है। अरबी को छिलके सहित पकाया जाता है, तो इसका पोषण मूल्य बरकरार रहता है। मुंह और गले की खुजली को रोकने के लिए इसे अच्छी तरह से पकाया जाना चाहिए। विभिन्न तरीके जैसे-उबालना, ब्लैंचिंग, स्टीमिंग, स्टूइंग, फ्राइंग और प्रेशर कुकिंग, पाचन क्षमता में सुधार, पोषक तत्वों की जैव उपलब्धता को बढ़ाने और पोषण संबंधी कारकों तथा खाद्यजनित रोगों को कम करने में प्रभावी हैं।

मूल्यवर्धित उत्पादों का विकास

भोजन के पूरक के रूप में अरबी को उबला, बेक किया, भुना या तला हुआ सेवन किया जा सकता है। इसका आटा, पेस्ट्री भरने, सॉसेज में बाइंडर और फूड सिस्टम में पायसीकारी के रूप में काम में आता है।

संग्रह

राजस्थान के अजमेर जिले में तोड़े गए ताजे हरे पत्ते व सब्जी विक्रेता से खरीदी हुए अरबी संग्रहित कर विभिन्न प्रकार के मूल्यवर्धित स्वादिष्ट खाद्य उत्पाद जैसे-अरबी चिप्स, स्टीम अरबी रोल्स, फ्राइड चिप्स या रेडी-टू-ईट इंस्टेंट फ्राइड अरबी तैयार किए जा रहे हैं।

कुपोषण दूर करने में मददगार

अधिकांश ग्रामीण लोग गंभीर रूप

अरबी की उबली फांकें

से कुपोषित होते हैं, आर्थिक स्थिति के कारण नहीं, बल्कि उपलब्ध पोषक तत्वों के उपयोग में असमर्थता के कारण भी। आजकल, जस्ता की कमी व्यापक है और दुनियाभर की आबादी के स्वास्थ्य और कल्याण को प्रभावित करती है। अरबी में जस्ता, पोषण के रूप में अच्छी मात्रा में पाया जाता है। यह कुछ गैर-पशु स्रोतों में से एक है, इसलिए स्वास्थ्य लाभ में जस्ता की कमी को दूर करने के लिए इसका सेवन किया जाना चाहिए, जो कि स्टंटिंग से संबद्ध रखता है। अनाज से एलर्जी वाले व्यक्तियों के लिए अरबी से बने खाद्य पदार्थ उपयोगी होते हैं। दूध के प्रति संवेदनशील शिशुओं द्वारा इसका सेवन लाभदायक है। यह फसल स्वास्थ्य एवं खाद्य असुरक्षा, गरीबी तथा बेरोजगारी की सामाजिक-आर्थिक समस्या का समाधान कर सकती है। ■

अरबी के कंद

शरीफा की बागवानी है लाभकारी

निर्मल कुमार मीना*, **कल्पना चौधरी*** और **विजय सिंह मीना****

शरीफा *(अन्नोना स्क्वामोसा)* अन्नोनेसी कुल का पौधा है। इसकी खेती भारत में महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, तमिलनाडु, असोम, कर्नाटक, ओडिशा आदि राज्यों में की जाती है। महाराष्ट्र एवं आंध्र प्रदेश में इसकी खेती व्यावसायिक स्तर पर की जाती है एवं उत्पादन में ये राज्य अग्रणी हैं। राजस्थान में इसकी खेती व्यावसायिक स्तर पर नहीं की जाती, परन्तु यह उदयपुर, चित्तौड़, झालावाड़ के पहाड़ी क्षेत्रों में जंगली अवस्था में पाया जाता है। राजस्थान के दक्षिण-पूर्व भाग में स्थित हाड़ौती में शरीफा का उत्पादन शुरुआती अवस्था में है। राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड के आधारीय वर्ष 2018-19 के आंकड़ों के अनुसार देश में 0.38 लाख हैक्टर क्षेत्रफल में शरीफा की खेती की जाती है, जिससे 3.20 लाख टन फल उत्पादन होता है।

शरीफा मूलरूप से उष्णकटिबंधीय और गर्म-शुष्क जलवायु का पौधा है। इसमें फूल आते समय गर्म-शुष्क और फलन के समय उच्च आर्द्र जलवायु की आवश्यकता होती है। शरीफा के लिए 50-80 सें.मी. की वार्षिक वर्षा इष्टतम होती है। इसके लिये हल्की दोमट रेतीली मृदा, जहां पर पानी का पूर्ण निकास हो, अच्छी रहती है। इसका पी-एच मान 5.5 से 9 वाली भूमि पर भी उत्पादन लिया जा सकता है।

*फल विज्ञान विभाग, उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, झालावाड़-326023 (राजस्थान); **भाकृअनुप-राष्ट्रीय पादप आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, नई दिल्ली-110012

प्रवर्धन

बीज द्वारा पौधे प्राप्त करने के लिए पके हुए फलों से बीज निकालकर इन्हें 2-3 दिनों तक पानी में डुबोकर रखा जाता है, ताकि अंकुरण आसानी से हो सके। इसके बाद इन बीजों को पौधशाला में पॉलीथीन की थैलियों में लगा देते हैं। वानस्पतिक विधियों में ग्राफ्टिंग (फरवरी-मार्च) में एवं कलिकायन द्वारा भी इसका प्रवर्धन किया जा सकता है। चयनित की गयी कलिका को मूलवृन्त पर जमीन से 20-25 सें.मी. उंचाई पर टी आकार का कट लगाकर उसमें बांध देते हैं

उन्नत किस्में

अन्नोना कुल की कई प्रजातियों में मुख्यत: शरीफा *(अन्नोना स्क्वामोसा)*, रामफल *(अन्नोना रेटिकुलाटा)*, लक्ष्मणफल *(अन्नोना आटेमोया)*, हनुमानफल *(अन्नोना चेरिमोया)* एवं सारसोप *(अन्नोना मुरिकाटा)* मुख्य हैं। मुख्य किस्में, अर्का सहान, फुले जानकी, पिंक मैमथ, अफ्रीकी प्राइड, बालानगर, बारबाडोस, काकरलापहाड़, एपीके सीए 1, रामसीता, महबूबनगर, सहारनपुर और वाशिंगटन आदि हैं।

भूमि की तैयारी एवं पौध रोपण

एक वर्ष बाद जब पौधे लगभग 15 सें.मी. के हो जायें, तब बरसात के मौसम में बगीचे में रोपण के लिए उपयुक्त होते हैं।

पोषण एवं औषधीय मूल्य

शरीफा में 45 प्रतिशत से 50 प्रतिशत खाद्य भाग होता है। फलों का गूदा सफेद एवं दानेदार होता है। यह प्रोटीन, रेशा, खनिजों और एंटीऑक्सीडेंट (जैसे-विटामिन 'ए' और 'सी') का एक समृद्ध स्रोत है। गूदे में उपस्थित कार्बोहाइड्रेट में मुख्यत: ग्लूकोज, फ्रक्टोज एवं सुक्रोज पायी जाती है। इसके गूदे को परिरक्षित करके पाउडर बनाया जाता है, जो कस्टर्ड, मिठाई इत्यादि बनाने में काम आता है। इसकी पत्तियां हृदय रोग में टॉनिक का कार्य करती हैं, क्योंकि इनमें टेट्राहाइड्रो, आइसोक्विनोसीन और एल्केलोइड पाया जाता है।

कृत्रिम परागण

हस्त परागण प्रक्रिया द्वारा उपज में वृद्धि

शरीफा में खासकर, अर्का सहन, किस्म में नर एवं मादा जननांग भिन्न-भिन्न समय पर पकते हैं तथा स्वबंध्यता की समस्या पायी जाती है। इससे पौधे में फल नहीं लगते हैं और यदि एक दो फल लगते भी हैं तो उनका आकार सही नहीं विकसित हो पाता है। अत: इस समस्या से बचने के लिए हस्त परागण की प्रक्रिया की जानी चाहिए। इसके लिए फूल विकसित होते समय 'बलानगर' किस्म से परागकण एक कप में सुबह 6 बजे से 8 बजे तक इकट्ठा करके 'अर्का सहन' किस्म के खुले हुए मादा पुष्पों में एक नंबर पेंट ब्रश की सहायता से छिड़क देने चाहिए। एक घंटे में लगभग 100 से 150 फूलों को परागित किया जा सकता है। अत: हस्त परागण द्वारा लगभग 60 से 80 प्रतिशत तक उपज बढ़ायी जा सकती है। 'अर्का सहन' में यह आवश्यक एवं निरंतर प्रक्रिया है।

पौधे लगाने के लिए एक महीने पहले 60 × 60 × 60 सें.मी. आकार के गड्ढे 5 × 5 मीटर की दूरी पर तैयार किये जाते हैं। लगभग 25 दिनों बाद ऊपरी मृदा में, 5-10 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी खाद, 500 ग्राम नीम की खली तथा 50 ग्राम नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटाश मिश्रण को अच्छी तरह मिलाकर भर देना चाहिये। पौधों की 3-4 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करने से पौधे की स्थापना अच्छी होती है।

खाद एवं उर्वरक

अधिक गणवत्तापूर्ण उपज लेने के लिए सही अनुपात एवं सही समय पर खाद-उर्वरक देनी चाहिए। शरीफा के पौधे में प्रत्येक वर्ष फलन होती है। इसके पूर्ण विकसित फलदार पौधे को 20-25 कि.ग्रा. गोबर की खाद, 250 ग्राम नाइट्रोजन, 125 ग्राम फॉस्फोरस और 125 ग्राम पोटाश प्रतिवर्ष जून एवं सितंबर में देना चाहिए।

प्राकृतिक परागण द्वारा तैयार शरीफा

कटाई-छंटाई

नये पौधों को उचित ढांचा प्रदान करने

सारणी: शरीफा के फलों का पोषण मूल्य

क्र. स.	पोषक तत्व	पोषण मूल्य (प्रति 100 ग्राम)
1.	ऊर्जा (किलो कैलोरी)	101
2.	कार्बोहाइड्रेट (ग्राम)	23.5
3.	प्रोटीन (ग्राम)	1.6
4.	खनिज (ग्राम)	0.9
5.	रेशा (ग्राम)	3.1
6.	कैल्शियम (मि.ग्रा.)	17
7.	फॉस्फोरस (मि.ग्रा.)	47
8.	आयरन (मि.ग्रा.)	1.5
9.	विटामिन बी$_1$ (मि.ग्रा.)	0.10-0.11

एवं मजबूत बनाने के लिए शुरुआती 3 वर्ष तक हल्की कटाई-छंटाई करनी चाहिये। इसके लिए पौधे के तने पर जमीन से 50-60 सें. मी. की उंचाई तक सभी आड़ी-तिरछी शाखायें हटा दी जाती हैं। छंटाई का कार्य पौधे में सुषुप्तावस्था आने पर किया जाता है, जो कि फलों की तुड़ाई के बाद दिसंबर-जनवरी में आती है। शरीफा में दिसंबर-जनवरी या फल तुड़ाई के लगभग 40-50 दिनों बाद छंटाई करना उचित रहता है। इसमें अधिक उपज एवं गुणवत्तापूर्ण फलन के लिए मुख्य, द्वितीयक और तृतीयक टहनियों पर हल्की छंटाई (20-30 सें.मी.) की जाती है।

हस्त परागण द्वारा प्राप्त फल

फलों की तुड़ाई एवं उपज

शरीफा में रोपण के लगभग 3-4 वर्ष बाद फल बनने प्रारंभ हो जाते हैं। जुलाई-अगस्त में फल बनना शुरू हो जाते हैं। अक्टूबर नवंबर में फल फककर तुड़ाई के लिए तैयार हो जाते हैं। फलों को परिपक्व अवस्था में तोड़कर इन्हें कृत्रिम रूप से भी पकाया जा सकता है। एक 4-5 वर्ष पुराने पौधे में 50-60 फल लगते हैं। एक पूर्ण विकसित एवं स्वस्थ शरीफा के पेड़ से 100-150 फलों तक की उपज प्राप्त हो जाती है। फल को हाथ से हल्का सा घुमाकर तोड़ा जाता है या क्लिपर की सहायता से इसकी तुड़ाई की जाती है।

कीट एवं रोग

इसके पौधे पर कीट-रोगों का ज्यादा प्रकोप नहीं होता है। इसमें आमतौर पर मिलीबग का प्रकोप होता है। मिलीबग के नियंत्रण के लिए 50-100 ग्राम क्यूनालफॉस 1.5 प्रतिशत चूर्ण प्रति पौधे की दर से पौधे के चारों ओर थाले में 15-20 सें.मी. की गहराई में मिलाना चाहिए। शरीफा में पत्ती धब्बा एवं एंथ्रेक्नोज रोग होते हैं। एंथ्रेक्नोज रोग में पत्तियों पर काले से भूरे रंग के धब्बे दिखाई देते हैं। इससे रोगी पत्तियां गिर जाती हैं और पतली टहनियां सूखना प्रारंभ कर देती हैं। रोग की रोकथाम के लिए ताम्रयुक्त फफूंदनाशी दवाओं जैसे-ब्लाइटॉक्स-50 प्रतिशत डब्ल्यू. पी. को 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

बालानगर शरीफा में फलन

दैहिक व्याधियां

स्टोन फल: पूर्ण आकार प्राप्त करने की बजाय कुछ फल सूखकर बहुत कठोर हो जाते हैं, जिसके कारण इन्हें स्टोन फल यानी पत्थर फलों के रूप में जाना जाता है। ये फल लंबे समय तक पेड़ पर लगे रहते हैं।

फलों का फटना: यह आमतौर पर मृदा की नमी में भिन्नता के कारण होता है। फलों में बोरॉन की कमी से भी फल फटते हैं। फलों को फटने से बचाने के लिए पौधों में समय पर सिंचाई करनी आवश्यक है।

तुड़ाई उपरांत प्रबंधन

तुड़ाई करने के बाद दो से तीन दिनों में फल पकने की प्रक्रिया पूरी हो जाती है। अत: उचित शीत भण्डारण अति आवश्यक होता है। स्थानीय बाजार में भेजने के लिए फलों को जूट के बोरे, लकड़ी के बॉक्स, बांस की टोकरियों या प्लास्टिक क्रेट्स का प्रयोग सुविधाजनक रहता है। बक्सों और प्लास्टिक के क्रेट्स के पैकेज का औसत वजन 20-25 कि.ग्रा. हो सकता है। बाहर भेजने के लिये कार्डबोर्ड (गत्ते वाले) बॉक्सों का प्रयोग करना चाहिये, ताकि फल सुरक्षित रूप से बाजार पहुंच सकें। एक आदर्श बॉक्स 38.0 × 24.5 × 9.0 सें.मी. आकार का और 3.5 कि.ग्रा. भार क्षमता वाला होना चाहिये।

बचाव

टमाटर की फसल के प्रमुख कीट

अनुराग शर्मा*, आरती शुक्ला*, सीमा ठाकुर* और **रेणु कपूर****

हिमाचल प्रदेश की अर्थव्यवस्था में सब्जी उत्पादन का विशेष महत्व है। यह किसानों के लिए बहुत ही लाभदायक व्यवसाय है। यहां जलवायु की विविधता के कारण विभिन्न प्रकार की सब्जियों की खेती सफलतापूर्वक की जा रही है। इस प्रदेश में सब्जियों का उत्पादन 72,000 हैक्टर क्षेत्रफल में हो रहा है और इनका उत्पादन 12,50,700 मीट्रिक टन है। सब्जियों पर कीटों का प्रकोप अधिक होता है। इससे पैदावार में कमी आती है और किसानों को नाशीकीटों द्वारा नुकसान झेलना पड़ता है। अतः कीटों का नियंत्रण अत्यंत महत्वपूर्ण है।

कीटनाशकों के दुष्प्रभावों को देखते हुए एकीकृत कीट प्रबंधन पर अधिक बल देने की आवश्यकता है।

टमाटर का फलछेदक

यह एक बहुपौधभक्षी कीट है, जो कि टमाटर को नुकसान पहुंचाता है। इस कीट की सुंडियां कोमल पत्तियों और फूलों पर आक्रमण करती हैं तथा फिर फल में छेद करके फल को ग्रसित करती हैं। फलछेदक की मादा शाम के समय पत्तों के निचले हिस्से पर हल्के पीले व सफेद रंग के अंडे देती है। इन अंडों से तीन से चार दिनों बाद हरे एवं भूरे रंग की सुंडियां निकलती हैं। पूरी तरह से विकसित सूंडी हरे रंग की होती है, जिनमें गहरे भूरे रंग की धारियां होती हैं। यह कीट फलों में छेद करके अपने शरीर का आधा भाग अंदर घुसाकर फल का गूदा खाती है। इसके कारण फल सड़ जाता है। इसका जीवनचक्र 4 से 6 सप्ताह में पूरा होता है।

*कृषि विज्ञान केंद्र, कंडाघाट, सोलन (हिमाचल प्रदेश);
**कृषि विज्ञान केंद्र, चम्बा (हिमाचल प्रदेश)

तंबाकू की फलछेदक सुंडी

यह भी एक बहुपौधभक्षी कीट है। इसके अगले पंख स्लेटी लाल भूरे रंग के होते हैं। पिछले पंख मटमैले सफेद रंग के, जिसमें गहरे भूरे रंग की किनारी होती है। इसकी मादा पत्तों के नीचे 100 से 300 अंडे समूह में देती है, जिनको ऊपर से पीले भूरे रंग के बालों से मादा द्वारा ढक दिया जाता है। इन अंडों से 4 से 5 दिनों में हरे पीले रंग की सुंडियां निकलती हैं। ये प्रारंभ में समूह में रहकर पत्तियों की ऊपरी सतह खुरचकर खाती हैं तथा बड़ी सुंडियां पत्तों को काटकर खाती हैं। पूर्ण विकसित सूंडी जमीन के अंदर जाकर प्यूपा बनाती है। इस कीट का जीवनचक्र 30 से 40 दिनों में पूरा होता है।

टमाटर के फलछेदक से हानि

फल मक्खी

फल मक्खी आकार में छोटी होती है, परंतु काफी हानिकारक होती है। यह मक्खी बरसात के मौसम में अधिक नुकसान करती है। इनके वयस्कों के गले में पीले रंग की धारियां देखी जा सकती हैं। इस कीट

फल मक्खी से ग्रस्त टमाटर

की मादा मक्खी फल प्रोह के अग्रभाग में अथवा फल के अंदर अंडे देती है। इन अंडों से चार-पांच दिनों में सफेद रंग के शिशु (मैगट) निकल जाते हैं। ये फलों के अंदर घुसकर इसके गूदे को खाना प्रारंभ कर देते हैं। ये सुंडियां तीन अवस्थाओं से गुजरती हैं तथा मृदा में पूर्णतः विकसित होने पर प्यूपा बन जाती हैं। इन प्यूपा से 8 से 10 दिनों में वयस्क मक्खी निकलती है। यह लगभग एक माह तक जीवित रहती है।

सफेद मक्खी

सफेद मक्खी का प्रकोप टमाटर की फसल की शुरुआत से अंत तक रहता है। इस कीट की मक्खी सफेद रंग की होती है और बहुत ही छोटी होती है। इसके वयस्क एवं शिशु दोनों ही फलों से रस चूसकर नुकसान पहुंचाते हैं। सफेद मक्खी की मादा पत्तों की निचली सतह में 150 से 250 अंडे देती है। ये अंडे बहुत महीन होते हैं, जिन्हें नंगी आंखों से नहीं देखा जा सकता। इन अंडों से 5 से 10 दिनों में शिशु निकलते हैं। शिशु तीन अवस्थाओं को पार कर चौथी अवस्था में पहुंचकर प्यूपा में परिवर्तित हो जाते हैं। प्यूपा से 10 से 15 दिनों बाद में वयस्क निकलते हैं और जीवनचक्र फिर से आरंभ कर देते हैं। इस कीट के शरीर से मीठा पदार्थ निकलता रहता है, जो पत्तों पर जम जाता है। इस पर काली फफूंद का आक्रमण होता है तथा पौधों को नुकसान पहुंचता है।

एकीकृत कीट प्रबंधन

- क्षतिग्रस्त फलों को इकट्ठा करके नष्ट कर दें।
- खेत में सफाई पर विशेष ध्यान दें।
- खेतों में फसलचक्र को बढ़ावा दें।
- गर्मियों में खेत की गहरी जुताई करें।
- अण्डों को और समूह में रहने वाली सुंडियों को एकत्रित करके नष्ट कर देना चाहिए।
- टमाटर की 16 पंक्तियों के बाद दो पंक्तियां गेंदे की लगाएं और गेंदे पर लगी सुंडियों को मारते रहें।
- रात्रि के समय रोशनी 'प्रकाश प्रपंच' का इस्तेमाल करना चाहिए।
- नर वयस्कों को पकड़ने के लिए 'फेरोमोन प्रपंच' (रासायनिक) का इस्तेमाल भी उपयोगी है। एक एकड़ जमीन में चार से पांच ट्रैप लगाने चाहिए।
- फूल आने पर बैसिलस थुरिनजियंसिस वार कुर्सटाकी 0.5 लीटर प्रति हैक्टर (70 मि.ली. 100 लीटर पानी में डाइपैल 8 लीटर) का छिड़काव करें।
- ट्राइकोग्रामा प्रेटियोसम के अंडों का 20,000 प्रति एकड़ चार बार प्रति सप्ताह की दर से खेतों में प्रयोग करें।
- सफेद मक्खी और पर्ण खनिक को पकड़ने के लिए पीले रंग के चिपचिपे (गोंद लगे हुए) लगे हुए ट्रैप का इस्तेमाल करना चाहिए। प्रति 20 मीटर में एक ट्रैप लगा सकते हैं।
- फल मक्खी के नर वयस्कों को पकड़ने के लिए क्यूल्यूर नामक आकर्षक या पालम ट्रैप का इस्तेमाल किया जाना चाहिए। 10 ग्राम गुड़ अथवा चीनी का घोल और 2 मि.ली. मैलाथियान (50 ई.सी.) प्रति लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करें। मिथाइल यूजीनॉल (40 मि.ली.) और मैलाथियान (20 मि.ली.) (2 मि.ली. प्रति लीटर पानी) के घोल को बोतलों में डालकर टमाटर के खेत में लटकाने से इस कीट को नियंत्रित किया जा सकता है।
- अधिक प्रकोप होने पर क्वीनालफॉस 20 प्रतिशत (1.5 मि.ली. प्रति लीटर पानी) या लैम्डा-साईहैलोथ्रिन (5 प्रतिशत ई.सी.) या इमिडाक्लोप्रिड 0.5 मि.ली. प्रति लीटर पानी या ट्रायजोफॉस 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें।
- खेत तैयार करते समय मृदा में क्लोरपाइरिफॉस 20 ई.सी. 2 लीटर का 20 से 25 कि.ग्रा. रेत में मिलाकर प्रति हैक्टर खेत में अच्छी तरह मिला दें।

पर्ण खनिक कीट

यह एक बहुभक्षी कीट है, जो कि संपूर्ण विश्व में सब्जियों एवं फलों की 50 से अधिक किस्मों को नुकसान पहुंचाता है। इसकी मादा पत्ते के ऊतक एवं निचली सतह के अंदर अंडा देती है। अण्डों से दो-तीन दिनों बाद निकलकर शिशु पत्ते की दो सतहों के बीच में रहकर नुकसान पहुंचाते हैं। ये शिशु सर्पाकार सुरंगों का निर्माण करते हैं। इन सफेद सुरंगों के कारण प्रकाश संश्लेषण की क्रिया प्रभावित होती है तथा फसल की पैदावार पर प्रतिकूल असर पड़ता है। वयस्क शिशु 8 से 12 दिनों बाद मृदा में गिरकर प्यूपा बनाते हैं। इनसे 8 से 10 दिनों बाद वयस्क निकल जाते हैं।

कटुआ कीट

यह कीट छोटे पौधों को काफी नुकसान पहुंचाता है। कटुआ कीट छोटे पौधों को रात के समय काटते हैं और कभी-कभी कटे हुए छोटे पौधों को जमीन के अंदर भी ले जाते हैं।

एक मादा सफेद रंग के 1200-1900 अंडे देती है। इनमें से चार पांच दिनों बाद सूंडी बाहर निकलती है। इसकी सुंडियां गंदी सलेटी भूरे-काले रंग की होती हैं। ये दिन के समय मृदा में छुपी हुई रहती हैं। पौधरोपण के समय से ही ये पौधे को मृदा की धरातल के बराबर तने को काटकर खाती हैं। इसकी सुंडियां लगभग 40 दिनों तक सक्रिय रहती हैं। इसका प्यूपा भी जमीन के अंदर ही बनता है। इसमें से लगभग 15 दिनों में वयस्क पतंगा निकलता है। इस कीट का जीवनचक्र 30 से 60 दिनों में पूरा हो जाता है।

लौकी में 3 जी कटिंग से अधिक उपज

दीपक मौर्य*, **मेनिशा रानी****, **शिरिन अख्तर***, **तीर्थार्थ चट्टोपाध्याय***** और **सर्वेश बरनवाल******

रासायनिक कीटनाशकों के बेतरतीब ढंग से प्रयोग के कारण, परागण के लिए लाभकारी कीट तेजी से घट रहे हैं। इसके साथ ही शोध में यह पाया गया है कि पृथ्वी के बढ़ते तापमान से जलवायु में आये परिवर्तन के कारण मधुमक्खियों की संख्या में कमी आ रही है। इसके कारण कद्दूवर्गीय फसलों में परागण काफी अधिक प्रभावित हो रहा है। कद्दूवर्गीय फसलों में ककड़ी, खीरा, खरबूजा, तरबूजा, नेनुआ, लौकी, करेला, चिचिन्हा, कद्दू, तुरई, पेठा लौकी इत्यादि शामिल हैं। इन सब्जियों में कम फलन की समस्या बढ़ रही है और यदि फलन होता भी है, तो बहुत ही छोटे फल लगते हैं, जो पौधे पर ही खराब हो जाते हैं। यह समस्या भारत सहित दुनिया के अधिकांश हिस्सों में व्याप्त है और मुख्यत: किसान जानकारी के अभाव में इससे ज्यादा पीड़ित हैं।

3 जी का तात्पर्य किसी भी फसल में केवल तीसरी पीढ़ी से है अर्थात पहली और दूसरी पीढ़ी की शाखाओं को छोड़कर तीसरी शाखा के विकास को बढ़ने देते हैं। बीज के अंकुरण के साथ केवल एक मुख्य शाखा बढ़ती रहती है, जिसे परिभाषित किया जाता है कि यह पहली पीढ़ी है। यदि यह पहली शाखा दूसरी शाखा देती है, तो इसे दूसरी पीढ़ी के रूप में परिभाषित किया जाता है। आगे जब यह दूसरी पीढ़ी की शाखा, अगली शाखा देती है, तो इसे तीसरी पीढ़ी कहा जाता है।

शोध अध्ययनों के अनुसार, पहली और दूसरी पीढ़ी की शाखाओं में नर फूलों की बहुलता होती है। इनमें नर व मादा फूलों का अनुपात 14:1 (नर : मादा) होता है, जो हमें अधिक फूलों के भ्रम पैदा करता है, लेकिन इसमें बहुत ही कम मात्रा में फल लगते हैं। तीसरी पीढ़ी की शाखाएं अधिकांश मादा फूलों के साथ बढ़ती हैं। इस स्थिति में उचित परागण के अनुसार इसका परिणाम प्रति शाखा और अंत में प्रति पौधे के रूप में अधिक फलन होता है, जो अंतत: प्रति शाखा या प्रति पौधे से अधिक उत्पादन के रूप में सामने आता है। कहने का तात्पर्य यह है कि दूसरी पीढ़ी की बजाय तीसरी पीढ़ी की शाखाओं को रखना चाहिए।

3 जी काटने का सिद्धांत

हम सभी जानते हैं कि फल, मादा फूलों से ही विकसित होते हैं। इसका मतलब है कि उत्पादन में मादा फूल की अंतिम भूमिका है, हालांकि नर फूल की भी आवश्यकता होती है। आमतौर पर, एक फसल में नर और मादा फूल का अनुपात असमान होता है। मादा फूलों की तुलना में नर फूलों की संख्या अधिक होती है।

3 जी काटने से पहले नर व मादा फूलों का अनुपात 14 : 1 होता है, जबकि 3 जी काटने के बाद नर व मादा फूलों का अनुपात 1 : 1 हो जाता है, तो 3 जी काटने के बाद मादा फूलों में बहुत तेजी से वृद्धि होती है। नर फूलों की कम संख्या भी बड़ी संख्या में मादा फूलों को परागित कर सकती है।

*उद्यान विज्ञान विभाग (सब्जी और पुष्प); ***पादप प्रजनन एवं आनुवंशिकी विभाग, बिहार कृषि विश्वविद्यालय, साबौर, भागलपुर (बिहार); **सब्जी विज्ञान विभाग, पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना (पंजाब); ****कृषि मौसम विशेषज्ञ, कृषि विज्ञान केंद्र, भदोही

3 जी कटिंग के चरण

शुरुआत में बोए गए बीज से बढ़ने वाली मुख्य शाखा को सावधानी के साथ बढ़ने दिया जाता है।

मुख्य शाखा लगभग 5-6 फीट (लौकी, ककड़ी और कद्दू) की ऊंचाई तक पहुंचने के बाद, पौधे के बढ़ते ऊपरी भाग को काट देते हैं। काटने के बाद यहां से दूसरी शाखा के विकास को बढ़ावा देते हैं। जब दूसरी पीढ़ी की शाखा 2-3 फीट ऊंचाई तक बढ़ जाती है, तो इस शाखा के ऊपरी भाग को भी पिछली बार की तरह काट देते हैं। अब, यहां से तीसरी पीढ़ी की शाखा के विकास को बढ़ावा देते हैं। इसके बाद तीसरी पीढ़ी की शाखा को पोषक तत्वों के निषेचन के साथ बढ़ने की अनुमति दी जानी चाहिए। इससे पौधे में मादा फूलों की संख्या भारी मात्रा में होगी। इससे फलन दोगुना या तिगुना हो जायेगा।

3 जी काटने का उद्देश्य

3 जी काटने का उद्देश्य यह है कि पौधे में नर और मादा फूलों के उचित अनुपात को बनाए रखना, जिससे अधिकतम उत्पादन लिया जा सके।

3 जी काटने के लिए अनुकूल पौधे

3 जी कटिंग कद्दूवर्गीय परिवार में लोकप्रिय है। यह अन्य फसलों में भी की जा सकती है। यहां उन फसलों की सूची दी गई है, जिनमें 3 जी काटना सफल है:

लौकी, तोरई, खीरा, कद्दू, नेनुआ, करेला, टमाटर, बैंगन, मिर्च, भिंडी आदि।

3 जी कटिंग से पहले विशेष ध्यान

- पौधे की निचली 4-5 पत्तियां किसी भी दूसरी शाखा को सहन नहीं करती हैं।
- दूसरी पीढ़ी की शाखाओं के ऊपरी भाग को 12 पत्तियों के चरण में काटें अर्थात् 12वें पत्ते के ऊपर काटना चाहिए।
- जब पौधे की ऊंचाई 5-6 फीट तक पहुंच जाती है, तो मुख्य शाखा वाले भाग को काट देना चाहिए।
- 3 जी काटने के दौरान मृदा सूखी नहीं होनी चाहिए, इसमें उचित नमी होनी चाहिए।
- पौधे को उचित धूप में रखना चाहिए।
- पौधे को बराबर छांटना चाहिए, ताकि यह झाड़ीदार न हो। यदि पौधा झाड़ीदार हो जाता है, तो सूर्य का प्रकाश पौधे में प्रवेश नहीं कर सकता है। इससे फल छोटे हो जाते हैं।

3 जी कटिंग से लाभ

3 जी कटिंग बहुत ही नवीन तकनीकी है। इसे कद्दूवर्गीय फसलों में अपनाते हैं। यह तकनीक लाभ के नजरिए से किसानों के लिए बहुत ही फायदेमंद और उपयोगी है। 3 जी कटिंग तकनीक के कुछ आशाजनक लाभ नीचे दिए गए हैं:

- उपज बढ़ाने में मदद मिलती है।
- 3 जी कटिंग से प्रति पौधे पर मादा फूलों की संख्या अधिक होती है। इससे फलन की मात्रा बढ़ जाती है।
- इस तकनीक से अपने उत्पादन को बड़े पैमाने पर बढ़ा सकते हैं। फलों की गुणवत्ता और आकार बहुत उच्च गुणवत्ता वाले होते हैं।
- इस तकनीक को अपनाने वाले किसानों को जमीन के एक ही टुकड़े से अधिक आय होती है।
- यह लौकी, खरबूजे, कद्दू, ककड़ी के पौधों के उचित प्रशिक्षण में मदद करता है, ताकि प्रत्येक बेल प्रकाश संश्लेषण और पौधों के विकास के लिए आवश्यक सूर्य के प्रकाश की आनुपातिक मात्रा प्राप्त कर सके।
- इसी प्रकार, इन फसलों में बेहतर प्रशिक्षण कटाई-छंटाई (प्रूनिंग) के कारण विशेष देखभाल के मामले में एक ही फसल संयंत्र से दीर्घकालिक उत्पादन संभव है।

लौकी में 3 जी काटने की प्रक्रिया

सबसे पहले, आपको फसल को बढ़ने देना चाहिए। इसे लगभग 5-6 फीट की ऊंचाई तक बढ़ने देते है। यदि इस ऊंचाई तक कोई भी शाखा विकसित होती है, तो आपको इसे बाहर निकाल देना चाहिए। अब आपको कुछ दिनों के लिए पक्ष शाखाओं को बढ़ने देना चाहिए। जब 12 पत्ते हो जाते हैं, तो उनके ऊपरी भाग को काट देते हैं।

नोटः 12 पत्ते के बाद काटने का कारण यह है कि ज्यादातर मादा फूल 12 पत्ते तक विकसित होते हैं। अंत में, कटी हुई शाखाओं के कुछ दिनों के बाद तीसरी पीढ़ी की शाखाएं दूसरी पीढ़ी की शाखाओं से विकसित होती हैं। ये तीसरी पीढ़ी की शाखाएं मादा फूल को विकसित करती हैं।

3 जी कटिंग का प्रारूप

पौधे में बड़ी संख्या में मादा फूल होते हैं और उनमें नर फूल (दूसरी पीढ़ी की शाखाएं) भी होते हैं। इसके कारण उत्पादन बढ़ जाता है।

इस प्रकार की फसलें यदि कोई अपनी छत पर उगाता है, तो उसे जांच करनी चाहिए कि परागण हुआ या नहीं। यदि मधुमक्खियां एवं तितलियां नहीं आ रही हैं, तो आप कृत्रिम परागण कर सकते हैं। इसके लिए, आप नर फूल से परागकण लेने और मादा फूलों में डालने के लिए ब्रश का उपयोग कर सकते हैं।

3 जी कटिंग से नुकसान

लाभ हमेशा नकारात्मक पहलुओं से जुड़े होते हैं, जिन्हें नुकसान के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। यह तकनीक किसानों के लिए कुछ नकारात्मक पहलुओं को भी साथ ला सकती है। उनका उल्लेख नीचे संक्षेप में किया गया है।

- 3 जी कटिंग के लिए अच्छे तकनीकी ज्ञान की आवश्यकता होती है, अन्यथा इससे नुकसान हो सकता है।
- उस हिस्से में रोग और कवक संक्रमण की आशंका हो सकती है। छंटनी की जाती है, तो उचित देखभाल की जानी चाहिए।

किसान अनुभव

3 जी कटिंग से किसी भी प्रकार का नुकसान नहीं होता है। यह बात किसान श्री शीतला प्रसाद मौर्य जी ने बताई, जो कादीपुर, सुल्तानपुर, उत्तर प्रदेश के निवासी हैं। उन्होंने बताया कि हम 3 जी कटिंग 3 वर्षों से करते आ रहे हैं। हमे किसी भी प्रकार का नुकसान नहीं हुआ है यह बहुत ही अच्छी और सफल तकनीक है।

सब्जियों की पौधशाला का उचित प्रबंधन

जगदीश पाटीदार*, बरखा शर्मा, आनन्द कुमार*, रमेश सिंह*,
आशाराम*, लाल चन्द*, नरेश कुमार*, इन्द्रदेव*** और **रमाकांत तिवारी***

साग-सब्जियों की सफल खेती मुख्य रूप से बीज एवं उससे तैयार पौध (रोप) पर निर्भर करती है। स्वस्थ एवं अच्छे गुणवत्ता के बीजों का उपयोग कर किसान रोगरहित व अपेक्षित मात्रा में पौध प्राप्त कर सकते हैं। व्यावसायिक रूप से सब्जी उत्पादन के लिए बीज स्वस्थ, शुद्ध तथा उन्नत किस्म का ही होना चाहिए। इसे कृषि/उद्यानिकी विभाग, राष्ट्रीय बीज निगम, राष्ट्रीय बीज विकास निगम, कृषि विश्वविद्यालय या भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के किसी मान्यता प्राप्त संस्थान से ही खरीदें।

पौधशाला ऐसा स्थान है जहां पर बीज के द्वारा पौध (रोप) तैयार करने के लिए आधारभूत आवश्यकताओं का उचित प्रबंध किया जाता है। यहां पर स्थान बदलकर रोपी जा सकने वाली सब्जियों जैसे-टमाटर, बैंगन, मिर्च, प्याज, गोभीवर्गीय सब्जियों के बीजों को कम स्थान में सघनता के साथ कम समय के लिए बोया जाता है। आजकल कद्दूवर्गीय सब्जियों की भी पौध तैयार कर रोपित की जाती है। ऐसे स्थान को पौधशाला कहते हैं। नर्सरी का क्षेत्र सीमित होने के कारण देखभाल करना आसान एवं सस्ता होता है, परिणामत: विपरीत परिस्थितियों में भी स्वस्थ एवं अपेक्षित मात्रा में पौधे प्राप्त किये जा सकते हैं।

*केन्द्रीय कृषिवानिकी अनुसंधान संस्थान, झांसी (उत्तर प्रदेश); **यंग प्रोफेशनल, कृषि विज्ञान केन्द्र, कालूखेड़ा, रतलाम, (मध्य प्रदेश)

पौधगलन

इस रोग से प्रभावित पौधे जमीन की सतह से गलकर जमीन पर गिरने लग जाते हैं और सूख जाते हैं। इसकी रोकथाम के लिए बीज व पौधशाला की मृदा का उपचार करने के बाद ही बीज की बुआई करें। यदि बीज जमने के बाद इस रोग का प्रकोप होता है, तो थीरम या कैप्टॉन नामक दवा की 2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी या कार्बेण्डाजिम 63 प्रतिशत+मैन्कोजेब 12 प्रतिशत की 1.0 ग्राम प्रति लीटर पानी का घोल बनाकर पौधशाला की मृदा को तर करें। रोग लगने की दशा में सिंचाई के साथ प्रवाहित करें।

सब्जियों का उनके उगाने के आधार पर वर्गीकरण

सीधे बीज

कुछ सब्जियों का उत्पादन लेने के लिए उनके बीज की, तैयार खेत में सीधे एवं उचित अंतराल पर बुआई कर दी जाती है। जैसे-भिण्डी, पालक, गाजर, मूली एवं सभी फलीदार सब्जियां आदि।

रोपण द्वारा बुआई की जाने वाली

कुछ सब्जियों के बीज सीधे मुख्य खेत में बोना ज्यादा जोखिम भरा होता है, अत: ऐसी सब्जियों की अलग से पौधशाला में पौध तैयार की जाती है और लगभग एक से डेढ़ माह बाद तैयार पौध को मुख्य खेत में रोपित कर दिया जाता है। सब्जियों की रोपणी मुख्यत: तीन प्रकार से तैयार की जा सकती है:

- **बीजों को क्यारियों में या प्रो-ट्रे में बुआई कर:** टमाटर, बैंगन, मिर्च, प्याज

एवं गोभीवर्गीय सब्जियां आदि।

- **बीजों की थैलियों में बुआई:** जैसे कद्दूवर्गीय सब्जियां
- **वानस्पतिक विधि या कलम द्वारा:** जैसे-परवल, कुन्दरू, शकरकंद

किस्मों का चुयन

सब्जियां तथा उनकी किस्मों का चयन मृदा के प्रकार एवं उसकी गुणवत्ता तथा जलवायु के आधार पर करना चाहिये। कुछ सब्जियों की उन्नत किस्में सारणी-1 में दी गई हैं।

क्यारियों का आकार

क्यारियों में रोपणी तैयार करने के लिए एक आदर्श रोपणी की क्यारियों का आकार 3 मीटर लंबा एवं 1 मीटर चौड़ा होना चाहिए। वर्षाकालीन नर्सरी के लिए सतह से 15-20 सें.मी. ऊंचाई वाली नर्सरी क्यारी उचित रहती है। उठी हुई क्यारी बनाने के लिए क्यारी के किनारों की मृदा निकाल कर क्यारी के बीच के हिस्से में डालते हैं। इससे क्यारी ऊंची हो जाती है और किनारों की तरफ नाली बन जाती है, जो जल निकास का कार्य करती है। दो क्यारियों के बीच कम से कम 50 सें.मी. का स्थान खाली छोड़ना चाहिए, ताकि संपूर्ण क्यारियों में अंत:कर्षण क्रियाएं (सिंचाई, निराई, गुड़ाई) आदि आसानी से की जा सकें। गर्मी के मौसम में धंसी हुई तथा सर्दी में सपाट क्यारियां बनानी चाहिए। धंसी हुई क्यारी बनाने के लिए क्यारी के अंदर की मृदा मेड़ पर डाल देते हैं।

तैयार नर्सरी

रोपणी में क्यारियों की संख्या का निर्धारण, फसल एवं खेत के आकार के अनुसार करना चाहिए।

रोपणी की तैयारी एवं उपचार

पौधशाला की मृदा की एक बार गहरी जुताई या फावड़े की सहायता से अप्रैल-मई में खुदाई करने के पश्चात दो से तीन हल्की जुताई करके मृदा को भुरभुरी बना लेते हैं। खरपतवार, बड़े आकार के फसल अवशेष जैसे-मक्का, ज्वार एवं अरहर के अवशेषों को निकाल लेते हैं। अब रोपणी उगाये जाने वाले स्थान पर प्रति वर्ग मीटर की दर से 2 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी हुई खाद या कम्पोस्ट खाद या 500 ग्राम केंचुए की खाद को ट्राइकोडर्मा से उपचारित करके तैयार खेत में डालकर मृदा में अच्छी तरह मिला दें। यदि पौधशाला की मृदा सख्त हो जाये, तो उसमें प्रति वर्ग मीटर 2.5 कि.ग्रा. रेत अवश्य मिलायें।

सारणी 1. विभिन्न सब्जियों की उन्नत एवं संकर किस्में

क्र.सं.	सब्जी	उन्नत किस्में	संकर किस्में
1	टमाटर	पूसा रूबी, पूसा गौरव, हिसार अरुण, हिसार अनमोल, हिसार गौरव, एस.एस.-101, पंजाब छुहारा	एन.एस.-815, एन.एस.-2535, एन.एस.-8014, स्वरक्षा, निधि, अविनाश-2, पूसा संकर-2, ए.आर.टी.एच.-3
2	बैंगन	पूसा पर्पल लांग, पूसा पर्पल राउण्ड, मुक्ता काशी, पंत सम्राट, पंत ऋतुराज, अर्का के व अर्का नवनीत, पूसा श्यामल	पूसा हाइब्रिड-6, पूसा हाईब्रिड-9, इम्प्रूव्ड निशा, रवैया, वी.एन.आर.-212
3	मिर्च	पूसा सदाबहार, पूसा ज्वाला, जवाहर-218, पंत सी-1, जापानी लौंग, इंदिरा मिर्च-1, अर्का श्वेत, अर्का नीलांचल प्रभा, अर्का ख्याती	एन.एस-1701, एन.एस.-1101, ज्योति, सुपरहॉट, अग्निरेखा, पंजाब हाइब्रिड, तेजस्विनी
4	शिमला मिर्च	कैलिफोर्निया वण्डर, अर्का मोहिनी, अर्का गौरव, अर्का बसन्त, इन्द्रा, अर्का अतुल्य	भारत लैरियो, हीरा, ग्रीन गोल्ड
5	फूलगोभी	पूसा दीपाली, पूसा कार्तिकी, अर्ली कुंवारी, पूसा शुभ्रा, पंत शुभ्रा, पंत गोभी-2, पंत गोभी-3, पूसा अगहनी, पूसा अर्ली सिंथेटिक, पूसा मेघना	एन.एस.-60, एन.एस.-66, एन.एस-75ए, बरखा-श्वेता, पूसा कार्तिक संकर, पूसा हाइब्रिड
6	पत्तागोभी	पूसा ड्रम हेड, गोल्डन ऐकर	ग्रीन चैलेन्जर, एन.एस-22, बहार, श्री गणेशगोल, केजीएमआर-1
7	प्याज	एन.-53, एग्री फाउण्ड डार्क रेड, एग्री फाउण्ड लाईट रेड	अर्का निकेतन, रॉयल सलेक्शन

सारणी 2. विभिन्न सब्जियों की पौध तैयार करते समय बीज की मात्रा का निर्धारण

फसल	बीज की मात्रा ग्राम/ हैक्टर क्षेत्र की रोपाई के लिए
टमाटर (संकर)	500-600
टमाटर (मुक्त परागित)	500-700
बैंगन	400-500
मिर्च	1000-1500
शिमला मिर्च	250-300
पत्तागोभी एवं फूलगोभी	500-600
प्याज	10-12 कि.ग्रा.
करेला, चिरचिटा, कद्दू, तरबूज, खीरा एवं शलजम	2-3 कि.ग्रा.
शतावर	3 कि.ग्रा.

मृदा शोधन

मृदा में अनेक प्रकार के कीटों एवं हानिकारक फफूंदों का भी वास होता है। मृदाजनित रोगों तथा छिपे कीटों से कोमल पौधों की सुरक्षा के लिए मृदा शोधन अत्यंत आवश्यक है। मृदा शोधन निम्न विधियों से की जा सकती है:

मृदा सौरीकरण

इस विधि में जिस स्थान पर पौधशाला

तैयार करनी हो, उस स्थान की रबी फसल की कटाई के पश्चात मार्च में गहरी जुताई कर अप्रैल में क्यारी बनाकर हल्की सिंचाई करके गीला कर दें, ताकि मृदा में नमी बनी रहे एवं खरपतवारों के बीज अंकुरित हो जाएं। अब इन क्यारियों को पारदर्शी पॉलीथीन से ढककर चारों तरफ के किनारे मृदा से दबा दें, ताकि पॉलीथीन के अंदर की हवा तथा वाष्प बाहर न निकले। बरसात शुरू होने के पूर्व लगभग 15 जून तक क्यारी को इसी तरह ढका रहने दें। आवश्यकतानुसार, 4-5 सप्ताह बाद पॉलीथीन की चादर हटाकर मृदा की अच्छी तरह गुड़ाई करके क्यारी बनाकर बीज की बुआई करते हैं। मृदा सौरीकरण से मृदाजनित रोगकारक मर जाते हैं। खरपतवार नियंत्रण होता है व साथ ही साथ मृदा में उपस्थित मूलग्रंथि सूत्रकृमि की संख्या में भी कमी आती है।

जैविक विधि

क्यारी उपचारित करने के लिए ट्राइकोडर्मा का प्रयोग किया जाता है। इसके लिए 8-10 ग्राम ट्राइकोडर्मा को 10 कि.ग्रा. गोबर की खाद में मिलाकर मृदा में मिला दें, इसके बाद हल्की सिंचाई कर दें। उपचार के उपरान्त क्यारियों में नमी बनाये रखें। जब भी ट्राइकोडर्मा या ऐसे ही किसी अन्य जैविक पदार्थ का उपयोग करें, तब अन्य किसी रसायन का प्रयोग न करें।

सीडलिंग ट्रे

सब्जियों खासकर मिर्च, टमाटर, बैंगन की संकर किस्मों का बीज काफी महंगा आता है। इसलिए आजकल रोगरहित मजबूत पौध उगाने के लिए संरक्षित वातावरण में सीडलिंग ट्रे का उपयोग किया जाता है। सीडलिंग ट्रे अलग-अलग आकार व खानों की होती है। इनमें बीज बोने के लिए 97-200 तक खाने हो सकते हैं। सीडलिंग ट्रे के प्रत्येक खाने का आकार एक से डेढ़ इंच तक होता है। इसके खानों में कोकोपिट, वर्मीकुलाइट और परलाइट के 3:1:1 के अनुपात में बने मिश्रण को भर देते हैं। सीडलिंग ट्रे में बीजों का अंकुरण अच्छा होता है व पौधे कम मरते हैं। पौधे जब खेतों में लगाने योग्य हो जाते हैं, तब इन ट्रे को खेत में ले जाकर खांचे से माध्यम सहित पौधों को निकालकर क्यारियों में निश्चित स्थान पर लगा देते हैं। इससे पौधों की जड़ों को नुकसान नहीं पहुंचता है और पौधे खेत में सही तरह से जम जाते हैं।

पौधशाला के लिए स्थान का चयन

- पौधशाला के लिए चयनित स्थान की मृदा हल्की, पर्याप्त कार्बनिक पदार्थयुक्त, उपजाऊ एवं भुरभुरी हो।
- अम्लीय या क्षारीय मृदा का चयन न करें।
- स्थान अपेक्षाकृत ऊंचा हो, जहां पर जल निकास का उचित प्रबंध हो।
- सिंचाई की सुविधा आसानी से उपलब्ध होनी चाहिए।
- खुला स्थान हो, जहां सूर्य का प्रकाश पूरे दिन बराबर मिलता रहे।
- चयनित क्षेत्र जंगली पशुओं, कुत्तों, गिलहरियों आदि से सुरक्षित होना चाहिए।
- प्रतिवर्ष पौधशाला का स्थान बदलते रहें।

रासायनिक विधि

कार्बोफ्यूरान कवकनाशी की 5 ग्राम मात्रा प्रति वर्ग मीटर पौधशाला की क्यारी में डालकर मृदा में अच्छी तरह से मिला देना चाहिए।

बीजोपचार

रोपणी या पौधशाला में बुआई से पूर्व 1.5 ग्राम थीरम + 1.5 ग्राम बाविस्टीन व 2.5 ग्राम डायथेन एम.-45 या 4 ग्राम ट्राइकोडर्मा से प्रति कि.ग्रा. बीज को उपचारित करके ही बोना चाहिए, ताकि बीजजनित फफूंद से फैलने वाले रोगों को नियंत्रित किया जा सके।

यदि नर्सरी क्यारी का उपचार ट्राइकोडर्मा विरिडी से किया जाता है, तो बीज उपचार भी ट्राइकोडर्मा विरिडी से करें।

क्यारियों में बीज की बुआई

क्यारी में सर्वप्रथम उसकी चौड़ाई के समानान्तर 5 सें.मी. की दूरी पर 0.5 सें.मी. गहरी पंक्तियां बना लेते हैं तथा इन्हीं पंक्तियों में लगभग 1 सें.मी. की दूरी पर बीज डालते हैं। बुआई के बाद बीजों को कम्पोस्ट, मृदा व रेत के (1:1:1) के मिश्रण से ढक देना चाहिए, परन्तु ध्यान रहे कि इस मिश्रण को 5-6 ग्राम थीरम या कैप्टॉन से प्रति कि.ग्रा. मिश्रण की दर से शोधित अवश्य कर लें। केवल मृदा से इसलिए नहीं ढकना चाहिए, क्योंकि मृदा सिंचाई का पानी पाकर सूखने पर सख्त हो जाती है। इस तरह तैयार पौधे घने न होने के कारण आर्द्रगलन रोग की समस्या से बच जाते हैं।

क्यारियों को पलवार से ढकना

क्यारियों में बीजों की बुआई करने के पश्चात इन्हें स्थानीय स्तर पर उपलब्ध पुआल, गन्ने के सूखे पत्ते या अन्य घास-फूस की पतली तह से ढक देना चाहिए। इससे मृदा में नमी बनी रहे और सिंचाई करने के दौरान पानी बीजों पर सीधे न पड़े अन्यथा बीजों पर ढका मिश्रण हट जायेगा और बीज का अंकुरण प्रभावित होगा।

क्यारियों में 50 प्रतिशत बीजों के सफेद धागेनुमा अंकुर दिखाई देने पर घास-फूस या पलवार को हटा देना चाहिए। अन्यथा अंखुआ बड़ा होने के बाद पलवार हटाने पर अंकुर टूटने एवं पौधे कमजोर होकर जड़ के पास से ही गलकर गिरने

लगते हैं। पौधशाला में यह अवस्था बीज बुआई के बाद मिर्च में 7-8 दिनों बाद, टमाटर में 6-7 दिनों बाद व बैंगन में 5-6 दिनों बाद दिखाई देती है।

सिंचाई

शुरू के 5-6 दिनों तक हजारे की सहायता से हल्की सिंचाई करें, ताकि बीज ज्यादा नमी पाकर बैठ न जाये।

वर्षा ऋतु में क्यारी की नालियों में उपस्थित आवश्यकता से अधिक पानी पौधशाला से बाहर निकालना चाहिए। पौध उखाड़ने के 4-5 दिनों पूर्व सिंचाई बंद कर देनी चाहिए, ताकि पौधों में प्रतिकूल वातावरण सहन करने की क्षमता विकसित हो जाये और पौधे कठोर हो जाएं। पौधे उखाड़ने से पहले हल्की सिंचाई कर दें, जिससे पौधे आसानी से उखड़ जाएं तथा जड़ें न टूटें।

खरपतवार नियंत्रण

क्यारियों में खरपतवार उग आते हैं, तो उन्हें हाथों से निकालते रहना चाहिए तथा व्यावसायिक स्तर पर खरपतवारनाशी जैसे पेन्डीमिथलीन की 3 मि.ली. मात्रा प्रति लीटर पानी में मिलाकर बीज की बुआई के 48 घण्टे के अंदर अच्छी तरह से छिड़क देते हैं। इससे खरपतवार की समस्या का निदान हो जाता है।

घने पौधों को निकालना

यदि क्यारियों में पौधे अधिक घने उग आयें, तो 1-2 सें.मी. की दूरी पर स्वस्थ पौधे को छोड़कर अन्य पौधों को छोटी अवस्था में ही उखाड़ देना चाहिए अन्यथा पौधे का तना पतला व कमजोर बना रहेगा। घने पौधे होने पर पौधगलन रोग लगने की ज्यादा आशंका रहती है।

नेटहाउस में सब्जियों की पौधशाला

पौध सुरक्षा

पौधशाला में रस चूसने वाले कीट जैसे-माहूं, जैसिड, सफेद मक्खी एवं थ्रिप्स काफी नुकसान पहुंचाते हैं। इनकी रोकथाम के लिए नीम तेल (एन.एस.के.ई. 1500 पी.पी.एम.) की 5 मि.ली. मात्रा को प्रति लीटर पानी की दर से या 2 मि.ली. रोगोर प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर बीज अंकुरण के 8-10 दिनों एवं 25-30 दिनों की अवस्था में छिड़काव करें।

रोपण से पूर्व पौधशाला में पौधों को कठोर बनाना

यह आवश्यक है कि पौधे चाहे कहीं उगाए गये हों, उनका अनुकूलन करना अत्यंत आवश्यक है। खुले वातावरण में उगाये गये पौधों का अनुकूलन 6-7 दिनों तक पानी रोककर किया जाता है।

नर्सरी में बीजारोपण

रोपण से पूर्व पौधों की जड़ों का उपचार

पौधशाला से रोप निकालने के पश्चात उसकी जड़ को उपचारित करने के लिए 10 ग्राम बाविस्टीन को 10 लीटर पानी में घोलकर तैयार कर लें। तैयार घोल में रोपा की जड़ को 10 मिनट तक डुबाकर रखें। इसके बाद खेत में लगाने के लिए प्रयोग करें।

उपचारित पौध का रोपण

- पौध उपचार के तुरन्त बाद खेत में लगायें।
- कद्दूवर्गीय सब्जियों के रोप को, जहां तक संभव हो, मेड़ बनाकर मेड़ के किनारे पर लगायें। गर्मियो में रोपा लगाने के पूर्व एवं रोपाई बाद सिंचाई अवश्य करें।
- वर्षा ऋतु में रोपण के बाद अवश्यकतानुसार सिंचाई करें। खेत में अनावश्यक पानी का भराव न होने दें।

पौध तैयार करने के लाभ

- मुख्य खेत खाली न होने पर एक से डेढ़ माह तक फसल को अन्य स्थान पर उगाया जा सकता है।
- रखरखाव आसानी से किया जा सकता है।
- कम अथवा ज्यादा वर्षा, तापमान, ओले, कीट व रोगों से आसानी से सुरक्षा कर सकते हैं।
- नर्सरी अलग जगह तैयार करने से मुख्य खेत को तैयार करने का समय मिल जाता है।

विधि

खरीफ प्याज उत्पादन तकनीक

रविन्द्र सिंह*, **सुमन कुमार*** और **संजय कुमार***

हिमाचल प्रदेश की जलवायु इतनी भिन्न है कि यहां पर सभी प्रकार की सब्जियों की खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है। सब्जी उत्पादन एक लाभदायक व्यवसाय होने के साथ-साथ मानव जीवन को पौष्टिक, स्वादिष्ट तथा सन्तुलित आहार प्रदान करता है। सब्जियों में प्याज घर-घर में प्रत्येक दिन उपयोग में आने वाली सब्जी फसल है। इसका उपयोग सब्जी, सलाद व मसालों के अलावा औषधि के रूप में भी किया जाता है। लू लगने पर प्याज के कंदों को खाना या इसके रस को पीना बहुत फायदेमंद पाया गया है। दिल का दौरा पड़ने पर प्याज का लेप लगाना तथा गले के दर्द में प्याज का उपयोग लाभदायक सिद्ध होता है। अतः यह न केवल औषधीय गुणों से भरपूर है अपितु हमारे भोजन का अभिन्न अंग भी है, जिसे पूरे वर्ष प्रत्येक घर में लगभग प्रत्येक व्यंजन में उपयोग में लाया जाता है। इसकी उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए इसकी खेती व उपलब्धता पूरे वर्ष होना अनिवार्य है।

भारत में प्याज की फसल बड़े पैमाने पर उगाई जाती है। इसका उत्पादन मुख्यतः महाराष्ट्र, गुजरात, कर्नाटक, तमिलनाडु, ओडिशा, मध्य प्रदेश, आंध्र प्रदेश, बिहार तथा पंजाब में होता है। महाराष्ट्र में प्याज की वर्षभर में तीन फसलें उगाई जाती हैं। उत्तर भारत में इसकी खेती केवल रबी मौसम में ही की जाती है। खरीफ प्याज का उत्पादन होते हुए भी यहां के किसानों में यह फसल अधिक प्रचलित नहीं है। हिमाचल के निचले पर्वतीय क्षेत्रों में रबी मौसम के प्याज की बीजाई अक्टूबर-नवंबर में की जाती है व दिसंबर में पनीरी का खेतों में रोपण किया जाता है तथा अप्रैल में फसल की खुदाई की जाती है। यह उपज सितंबर तक यहां सफलतापूर्वक उपयोग में लाई जाती है परन्तु सुषुप्तावस्था समाप्त होने के बाद इसकी गट्ठियों में अगस्त-सितंबर में अंकुर आना शुरू हो जाते हैं। इससे इसकी

प्याज की फसल

*चौ. स. कु. हिमाचल प्रदेश कृषि विश्वविद्यालय, कृषि विज्ञान केन्द्र, बिलासपुर स्थित बरठीं-174029 (हिमाचल प्रदेश)

प्याज की बिजाई

गर्मियों के प्याज की गट्ठियां तैयार करने के लिए इन किस्मों के बीज की बिजाई मार्च मध्य में की जाती है। क्यारी घर के नजदीक ऐसी जगह बनायें, जहां पूरा दिन धूप रहे तथा देखभाल भी आसानी से की जा सके। क्यारी की लंबाई 3 मीटर, चौड़ाई 1 मीटर तथा ऊंचाई 15-20 सें.मी. होनी चाहिए। लंबाई आवश्यकतानुसार घटाई या बढ़ाई भी जा सकती है। चौड़ाई 1.00 से 1.30 मीटर से अधिक नहीं होनी चाहिए, क्योंकि इससे अधिक चौड़ाई वाली क्यारी से खरपतवार निकालने व अन्य कृषि कार्यों को सम्पन्न करने में असुविधा रहती है। क्यारियों में बिजाई से पहले गली-सड़ी गोबर की खाद (20-25 कि.ग्रा.), 12:32:16 मिश्रित खाद की मात्रा 100 ग्राम प्रति क्यारी की दर से मिला लें।

लाभकारी है प्याज

भण्डारण क्षमता पर विपरीत असर पड़ता है। इस कारण उत्पादक व विक्रेता इसे अतिशीघ्र उपयोग में लाते हैं। इससे प्रत्येक वर्ष उत्तर भारत में अक्टूबर से प्याज की कमी महसूस की जाने लगती है। दक्षिणी भारत व अन्य

ताजा प्याज

बीज के लिए प्याज की कली

देशों से आयात करने के कारण इन दिनों प्याज के दाम यहां बढ़ जाते हैं।

खरीफ प्याज, जिसे गर्मियों का प्याज भी कहा जाता है, की उत्पादन तकनीक जिला बिलासपुर में कृषि विज्ञान केन्द्र, बरठीं द्वारा पिछले 12 वर्षों से लगातार किसानों के समक्ष प्रदर्शित की जा रही है। केन्द्र यहां के किसानों को इसकी उत्पादन तकनीक, गट्ठियां, जिन्हें गट्ठी भी कहा जाता है, तैयार कर प्रदर्शन अपने प्रक्षेत्र पर करवाता है। कृषि विज्ञान केन्द्र, बिलासपुर स्थित बरठीं वर्ष 2006-07 से ही खरीफ प्याज के लिए अनुमोदित किस्में एन-53, एग्रीफाउण्ड डार्क रेड के बीज से गट्ठियों द्वारा प्याज उत्पादन तकनीक का प्रचार-प्रसार कर रहा है।

बीज की बिजाई से पूर्व फफूंदनाशक दवा जैसे-कैप्टॉन/बाविस्टीन/थीरम की मात्रा 2 या 3 ग्राम रसायन प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करें। उपचार के लिए बीज को किसी सूखे बर्तन में रखें। बीज और रसायन मिलाकर पानी का हल्का छिड़काव कर हिलाएं, जब तक कि यह सभी बीजों में अच्छी तरह से चिपक न जाए। बीजाई से पहले बीज को छाया में सुखा लें। 125-150 ग्राम बीज प्रति क्यारी की दर से 10-12 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर क्षेत्र के लिए पर्याप्त होगा। ध्यान रहे पनीरी तैयार करते समय नाइट्रोजन व रासायनिक खादों का उपयोग अधिक न करें। अन्यथा गट्ठियां का आकार अधिक हो जाता है। बीजाई के बाद बीज के उचित अंकुरण के लिए इसे केंचुआ खाद से ढक दें। ताजी केंचुआ खाद का उपयोग न करें। बीज की बीजाई थोड़ी घनी करें। हमें

हरे प्याज की बढ़ती मांग

तैयार हरे प्याज

हरा प्याज

प्याज के एक कि.ग्रा. बीज से औसतन 50-70 कि.ग्रा. तक गट्ठियां तैयार हो जाती हैं तथा एक कि.ग्रा. गट्ठियों की बीजाई से 60-80 कि.ग्रा. पत्तों सहित हरा प्याज प्राप्त किया जा सकता है। इन गट्ठियों की बीजाई व अन्य सस्य क्रियाएं ठीक उसी तरह की जाती हैं, जिस तरह रबी मौसम में हम पनीरी रोपण करते हैं। केवल पौध की जगह गट्ठियों की बीजाई की जाती है।

गट्ठी का आकार छोटे से छोटा रखना चाहिए। आवश्यकतानुसार पनीरी की फव्वारे से शाम के समय सिंचाई करें। मई के शुरू में जब पनीरी 8-10 सें.मी. ऊंची हो जाये यानी रोपण के लिए तैयार हो जाये, तो इस समय सिंचाई बन्द कर दें। इससे पनीरी के पत्ते अधिक गर्मी होने के कारण मुरझाने लगेंगे। इस पीली पड़ी पनीरी को जून के प्रारंभ में गट्ठियों सहित उखाड़कर पतली तह में छाया में सुखाये तथा हिलाते रहें। पत्तों के अच्छी तरह सूखने के बाद उन्हें गट्ठियों से अलग कर लें। इन गट्ठियों का भण्डारण कर अगस्त के दूसरे पखवाड़े में बरसात समाप्त होने के बाद 15 सें.मी. पंक्ति से पंक्ति तथा 7-10 सें.मी. गांठ से गांठ की दूरी पर बीजाई करें।

गट्ठियों की रोपाई से पहले खेत अच्छी तरह तैयार कर लें। उचित नमी होने पर गांठें 5-6 दिनों में की अंकुरित हो जाती हैं। इस प्याज को हरे प्याज के तौर पर पत्तों सहित अक्टूबर से बेचा जा सकता है। बाजार में प्याज के इन दिनों अधिक दाम होने के कारण किसान हरे प्याज से कम लागत से अधिक आमदनी कमा सकते हैं। औसतन 1 हैक्टर क्षेत्रफल से 200-225 क्विंटल प्याज प्राप्त हो सकता है। यह प्याज अक्टूबर से जनवरी तक हरे प्याज के रूप में तथा जनवरी में पत्तों सहित उखाड़कर व सुखाकर 4-5 माह तक भण्डारित किया जा सकता है। ■

सब्जियों के नियमित सेवन से बढ़ाएं प्रतिरोधकता

हरे कृष्ण*, **जगदीश सिंह***, **राजनाथ प्रसाद***, **राज बहादुर यादव*** और **मनोज सिंह***

वैश्विक महामारी बन चुके कोरोना विषाणु से बचाव के लिए पूरी दुनिया में वैक्सीन का सहारा लिया जा रहा है। यह भी वास्तविकता है कि वर्तमान में इस रोग से बचाव के बहुत सीमित विकल्प हैं। इस महामारी से लड़ने के लिए एहतियाती उपायों जैसे-हाथ धोना, सामाजिक दूरी बनाए रखना और योग/व्यायाम को बचाव की पहली पंक्ति के रूप में अपनाने की सलाह दी जा रही है। प्रतिरक्षा (इम्युनिटी) की दूसरी पंक्ति के रूप में, प्रतिरक्षा तंत्र को सुदृढ़ बनाए रखने के लिए स्वस्थ आहार की अनिवार्यता पर बल दिया जा रहा है। वैज्ञानिकों ने पाया कि यह विषाणु कमजोर प्रतिरक्षा तंत्र वाले लोगों अथवा मधुमेह, दमा, तथा हृदय संबंधित रोगों से ग्रस्त लोगों को शीघ्र प्रभावित करता है। कोरोना एक नया विषाणु है, अतः वैज्ञानिक भी इसके बारे में अधिक नहीं जानते हैं। इसलिए लोगों को प्रतिरक्षा तंत्र सुदृढ़ रखने की सलाह दी जा रही है। इन परिस्थितियों में दैनिक जीवन में उपयोग की जाने वाली मौसमी सब्जियों के भरपूर सेवन से प्रतिरक्षा तंत्र को मजबूत करके एवं अन्य विकारों में सुधार लाकर कोरोना से बचा जा सकता है।

कोरोना रोग से बचाव के लिए प्रतिऑक्सीकारक तत्वों (एंटीऑक्सीडेंट) से भरपूर सब्जियों का नियमित सेवन आवश्यक है। प्रस्तुत लेख में ऐसी ही कुछ सब्जियों के गुणों के बारे में संक्षिप्त चर्चा की जा रही है, जिनका सेवन प्रतिरोधक क्षमता में वृद्धि कर कोरोना समेत अन्य रोगों के विरुद्ध शरीर को सशक्त बनाता है।

गोभीवर्गीय सब्जियां

गोभी कुल की सब्जियों जैसे-फूलगोभी, पत्तागोभी, ब्रोकली, ब्रूसेल्स स्प्राउट इत्यादि में पाया जाने वाला अल्कलॉइड ग्लूकोब्रासिसिन बायोट्रांसफॉर्म, एस्कॉर्बिजेन (एल-एस्कॉर्बिक अम्ल का एक इंडोलयुक्त व्युत्पन्न), एक सशक्त इम्युनोमोडुलेटर है। इस यौगिक समूह का सक्रिय व्युत्पन्न एन-मिथाइलएस्कॉर्बिजेन ब्रैसिका प्रजाति में पाया जाता है। इसके विषाणु संक्रमण के विरुद्ध चिकित्सीय प्रभाव की पुष्टि हो चुकी है। इसके अतिरिक्त, ब्रोकली में पाए जाने वाला सल्फोराफेन (प्राकृतिक आइसोथायोसाइनेट), श्वेत रक्त कणिकाओं की संख्या बढ़ाता है। यह फैगोसाइटिक (भक्षकाण्विक अंतर्ग्रहण) गतिविधि बढ़ाने में भी सहयोग करता है।

फूलगोभी

मीठा नीम

मीठे नीम या करी पत्ते में भी इम्युनिटी-मॉडुलक गुण होने के कारण इसके सेवन से शरीर में भक्षकाण्विक अंतर्ग्रहण सूचकांक एवं रोग-प्रतिकारक (एंटीबॉडी) अनुमापांक में सार्थक वृद्धि देखी गयी है, जिससे इसके प्रतिरोधी गुणों का पता चलता है।

भाकृअनुप-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी-221305 (उत्तर प्रदेश)

गाजर कुल की सब्जियां

गाजर, सेलेरी, धनिया और पारस्ले में क्वैरसेटिन, आइसोपिम्पिनेलिन, रुटिन, बरगैप्टेन

गाजर

और जेन्थोटॉक्सिन जैसे फ्लेवनोइड्स भरपूर मात्रा में होते हैं। ये यौगिक लिम्फोसाइट सक्रियता को बढ़ाते हैं, जिसमें सीडी 8+ टी कोशिका वृद्धि भी सम्मिलित है।

लहसुन

इसमें भी कई तरह के एंटीवायरल तत्व, विशेषकर ऑर्गेनोसल्फर यौगिक, पाए जाते

लहसुन

हैं। लहसुन के सेवन से इम्युनिटी बढ़ाने में अपेक्षित सहयोग मिल सकता है।

लोबिया

विटामिन 'सी' एवं 'ई', कैरोटिनोइड्स, फिनोल्स जैसे प्रतिऑक्सीकारक तत्व लोबिया में अच्छी मात्रा में पाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त, इसमें पाये जाने वाले ओमेगा-3 ऑयल से दमे एवं मधुमेह में भी सुधार होता है।

चौलाई

इसमें फोलेट, रूटीन मैंगनीज और टोकोफेरॉल भरपूर मात्रा में होते हैं। अतः इसका सेवन इम्युनिटी को बढ़ाने की दृष्टि से बहुत अच्छा होता है।

कुम्हड़ा

इसमें कैरोटिनोइड्स, एस्कोर्बिक अम्ल, फोलेट, टोकोफेरॉल, बीटा-क्रिप्टोजैन्थिन जैसे प्रतिऑक्सीकारक तत्व प्रचुर मात्रा में होते हैं। इनसे शरीर के प्रतिरक्षा तंत्र को मजबूत बनाए रखा जा सकता है। कुम्हड़े का सेवन हृदय रोगियों के लिए भी लाभप्रद होता है। इसके सेवन से सीडी 4 + सीडी 8 + तथा सीडी 4 +/सीडी 8 + टी कोशिकाओं के अनुपात में भी वृद्धि होती है।

नसदार तोरई

इसके बीज में पाये जाने वाले लुफ्फाक्यूटिन नामक यौगिक के कारण इसमें इम्युनिटी-मॉडुलक की विशेषता देखी गई है।

नेनुआ

इसमें डायटरी फाइबर, बीटा-कैरोटीन, रिबोफ्लेविन, थायमीन, विटामिन 'सी', जिंक, आयरन इत्यादि अच्छी मात्रा में पाये जाते हैं, जिनसे मधुमेह के रोगियों को काफी लाभ मिलता है।

मिर्च

मिर्च चाहे हरी हो या लाल इसके सेवन से शरीर को जरूरी विटामिन 'सी', 'बी 6', 'के' और 'ए' की पूर्ति होती है। हरी मिर्च विशेषकर विटामिन 'ई' से भरपूर होती है, जिनके सेवन से इम्युनिटी को मजबूत करने में मदद मिलती है। मिर्च में उपस्थित कैप्सेसिन के कारण न केवल इम्युनिटी को मजबूत करने बल्कि हृदय रोगों एवं मधुमेह के प्रबंधन में भी सहायता मिलती है।

भिंडी

इसमें विटामिन 'सी' व 'के', कैरोटीनोइड्स, डायटरी फाइबर, कैल्शियम और पोटेशियम प्रचुर मात्रा में होते हैं। ये रक्त में शर्करा एवं कोलेस्ट्रॉल के स्तर को नियंत्रित करते हैं। अतः भिंडी के नियमित सेवन से मधुमेह एवं दमा रोग में काफी लाभ होता है।

खीरा

खीरे के नित्य सेवन से हृदय रोगों से बचाव में काफी सहायता मिलती है। इसमें एस्कार्बिक अम्ल, कैरोटीनोइड्स, फ्लेवोनोइड्स जैसे-प्रतिऑक्सीकारक तत्व एवं पोटेशियम प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होते हैं।

लौकी

लगातार चल रहे बंद (लॉकडाउन) एवं सामान्य दिनचर्या ठप्प होने के कारण कुछ लोगों में अवसाद के लक्षण भी देखे जा रहे हैं। ऐसे में लौकी का सेवन उनके लिए उपयोगी हो सकता है। इसमें कोलिन नामक यौगिक होने के कारण यह तनाव कम करने में सक्षम है। इसके अतिरिक्त, लौकी के सेवन से खून में सफेद रक्त कणिकाओं और लिंफोसाइट्स की मात्रा बढ़ती है। इसमें उपस्थित एंटीबायोटिक और हृदयरक्षक गुण भी कोरोना सहित किसी भी प्राणघातक रोग से बचाव के लिए प्रतिरक्षा तंत्र को सुदृढ़ बनाए रखने एवं संक्रमण के जोखिम को सीमित करने में लाभदायी हो सकते हैं। जैवसक्रिय (बायोएक्टिव) खाद्य पदार्थों जैसे कि इम्यूनोमॉड्यूलेटरी गुणों वाली सब्जियों का सेवन एक प्रभावी और मजबूत प्रतिरक्षा तंत्र के निर्माण की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम हो सकता है। ■

सहजन

सहजन में इम्युनिटी-मॉडुलक के गुण विद्यमान होने के कारण यह कोरोना जैसे गंभीर रोगों से लड़ने में प्रतिरक्षा तंत्र को बहुत सहयोग कर सकता है। इम्युनिटी-मॉडुलक वे तत्व होते हैं, जो इम्युनिटी में आवश्यकतानुसार परिवर्तन लाकर शरीर को रोगों से लड़ने में सक्षम बनाते हैं। इसके सेवन से न्यूट्रोफिल सूचकांक एवं भक्षकाण्विक अंतर्ग्रहण सक्रियता भी बढ़ती है। इसके अतिरिक्त, सहजन में संतरे से सात गुना अधिक विटामिन 'सी', गाजर से 10 गुना ज्यादा विटामिन 'ए', दूध से 17 गुना अधिक कैल्शियम, केले से 15 गुना ज्यादा पोटेशियम एवं पालक से 25 गुना ज्यादा आयरन होता है। इसमें टेरिगोस्पेर्मीन तत्व की उपस्थिति के कारण एंटीबायोटिक गुण भी होते हैं।

टमाटर

टमाटर को कुछ लोग 'सुपर फूड' की भी संज्ञा देते हैं। इसमें विटामिन 'सी' और लाइकोपिन प्रचुर मात्रा में होते हैं, जो इम्युनिटी बढ़ाने के लिए काफी जरूरी होते हैं। इसके अतिरिक्त, फोलेट एवं मैंगनीज जैसे जरूरी विटामिन और खनिज भी पाये जाते हैं। ये शरीर को स्वस्थ बनाए रखने के लिए आवश्यक हैं।

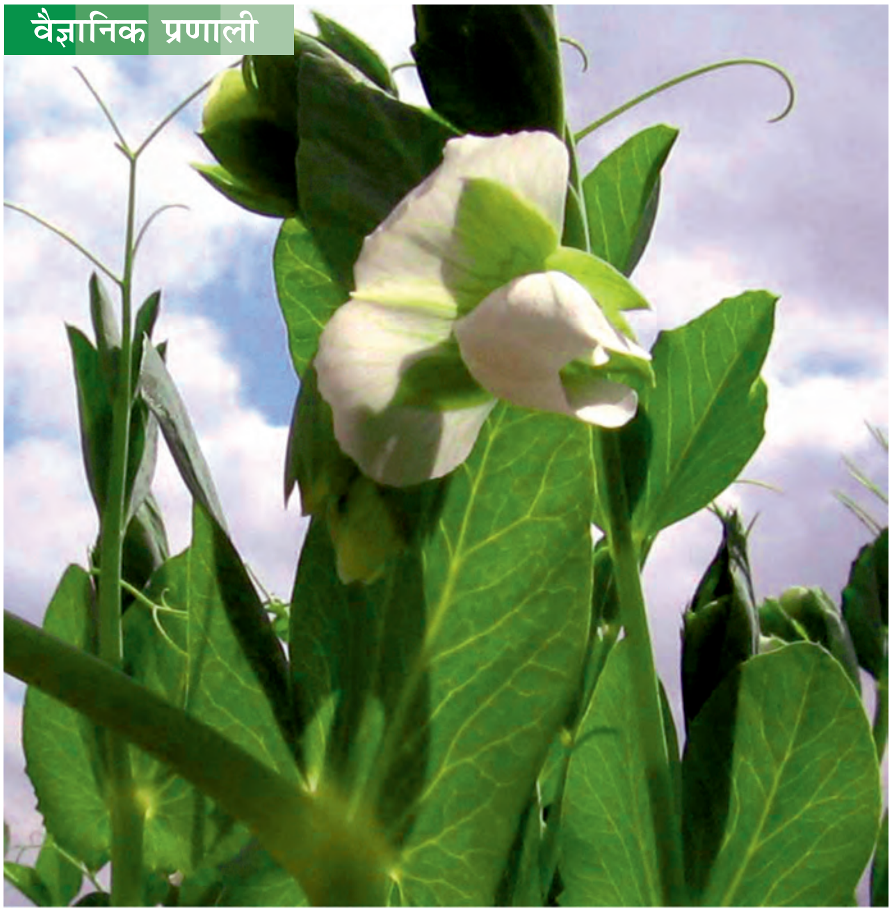

मटर की उन्नत खेती

अरविन्द*, **ऋषिपाल कुमार**** और **राजेन्द्र सिंह*****

रबी दलहनी फसलों में मटर का महत्वपूर्ण स्थान है। इसकी खेती दाल एवं सब्जी के लिए की जाती है। सूखी मटर को दलकर दाल तथा सूप बनाने के काम में लाया जाता है। इसमें प्रोटीन 22.5 ग्राम, वसा 1.8 ग्राम, शर्करा 62.1 ग्राम, कैल्शियम 64 मि.ग्रा. और लौह तत्व 4.8 मि.ग्रा. प्रति 100 ग्राम की दर से पाया जाता है। कच्चे दानों का परिरक्षण करने से दाने लंबे समय तक ताजा बने रहते हैं। सूखे दानों का उपयोग दाल के रूप में भी किया जाता है। इसका भूसा पशुओं के चारे के रूप में भी उपयोगी होता है।

भारत में मटर का संभावित क्षेत्रफल वर्ष 2018-19 में 5.54 लाख हैक्टर था जबकि उत्पादन 5524 मीट्रिक लाख टन था। इसकी उत्पादकता 9 क्विंटल प्रति हैक्टर थी, जो कि काफी कम है। भारत की अर्थव्यवस्था में मटर का विशेष स्थान होने के कारण इसका अधिक महत्व है। यह सब्जी और दाल, दोनों के लिए इस्तेमाल की जाती है। मटर में कार्बोहाइड्रेट तथा विटामिन के साथ-साथ पाच्य प्रोटीन की मात्रा अधिक होती है। इसके अतिरिक्त इसमें खनिज पदार्थ की मात्रा भी पर्याप्त होती है। पिछले कुछ वर्षों से मटर का क्षेत्रफल और उत्पादकता कम हो रही है। इसका मुख्य कारण है उन्नत तरीके से खेती न करना। उन्नत तरीके से खेती करके 20-25 प्रतिशत मटर की उत्पादकता बढ़ाई जा सकती है। यदि समय से कीट व व्याधियों पर नियंत्रण कर लिया जाये, तो उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है। प्रस्तुत लेख में कीट व व्याधियों के रोकने के उपाय बताये गये हैं।

*सहनिदेशक/सहप्राध्यापक उद्यान अनुसंधान (उद्यान विभाग); **प्रक्षेत्र सहायक जैविक नियंत्रण प्रयोगशाला (कीट विज्ञान विभाग/उद्यान विभाग); **सहप्राध्यापक, प्रभारी जैविक नियंत्रण प्रयोगशाला (कीट विज्ञान विभाग), सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, मेरठ (उत्तर प्रदेश)

मृदा व जलवायु

दोमट व बलुई दोमट मृदा, जिसका पी-एच मान 5.5 से 6.0 के मध्य हो तथा जो कार्बनिक जीवांश से भरपूर हो, मटर की खेती के लिए उपयुक्त रहती है। जल निकास का अच्छा प्रबंधन भी होना चाहिए। इसकी खेती के लिए ठंडी एवं शुष्क जलवायु उपयुक्त होती है। फसल की अच्छी बढ़वार के लिए 15 से 25 डिग्री सेल्सियस तापमान की आवश्यकता होती है। लंबे समय तक पाला पड़ने की दशा में उपज कम मिलती है।

भूमि की तैयारी

पहली जुताई मृदा पलटने वाले हल से तथा बाद की 2 से 3 जुताइयां देसी हल या हैरो चलाकर खेत में पाटा चलाकर करनी चाहिए, ताकि खेत में बिखरे ढेले टूट जायें व मृदा अच्छी तरह भुरभुरी हो जाए। दीमक व अन्य भूमिगत कीटों की समस्या होने पर इनकी रोकथाम के लिए बुआई से पूर्व अन्तिम जुताई के समय मिथाइल पैराथियान 2 प्रतिशत चूर्ण या क्विनालफॉस 10.5 प्रतिशत चूर्ण 25 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से भूमि में अच्छी तरह डालकर मिलाना चाहिए।

राइजोबियम कल्चर बीजोपचार

एक पैकेट 200 ग्राम राइजोबियम कल्चर से 10 कि.ग्रा. बीज को उपचारित करके बोना चाहिए। 50 ग्राम गुड़ अथवा चीनी को आधा लीटर पानी में घोलकर उबाल लें। ठंडा होने पर इस घोल में एक पैकेट राइजोबियम मिला दें। बाल्टी में 10 कि.ग्रा. बीज डालकर अच्छी प्रकार मिलायें, ताकि सभी बीजों पर कल्चर का लेप चिपक जाये। उपचारित बीजों को 8-10 घंटे तक छाया में फैला दें और सूखने दें। बीजों को धूप में नहीं सुखाना चाहिए। बीजोपचार दोपहर

सब्जी मटर की उन्नत किस्में

अगेती किस्में: असोजी अर्केल, जवाहर मटर-3 एवं 4, पंजाब अगेती, पूसा प्रगति, काशी उदय, काशी नंदिनी, काशी मुक्ति, आजाद पी-3 एवं वीएल-7

मध्यम एवं पछेती किस्में: बोनविले, वीएल 3, पंत उपहार, जवाहर मटर 1 से 2, काशी, शक्ति, पालम, प्रिया व लिंकन

अन्य प्रजातियां

आदर्श, शिखा, सपना, प्रकाश, अमन, विकास, स्वाति, मालवीय मटर-15, केपीएमआर 522 तथा केपीएमआर 400। ये मटर की अधिक उपज देने वाली तथा चूर्णिल आसिता पाउडरी मिल्ड्यू रोग अवरोधी प्रजातियां हैं।

के बाद करें, जिससे बीज शाम को अथवा दूसरे दिन सुबह बोया जा सके। राइजोबियम कल्चर से उपचारित करने से 4–5 दिनों पहले ही कवकनाशियों से बीजों को उपचारित कर लेना चाहिए।

बीज दर व बुआई का समय

इसकी बुआई के लिए मध्य अक्टूबर से मध्य नवंबर का समय उपयुक्त होता है। बुआई के समय तापमान लगभग 22 डिग्री सेल्सियस होने पर बीजों का अंकुरण अच्छा होता है। अगेती किस्मों के लिए बीज की मात्रा 100 से 120 कि.ग्रा., जबकि मध्यकालीन एवं पछेती किस्मों के लिए 80 से 90 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की आवश्यकता होती है। बीज को बुआई से पूर्व ट्राइकोडर्मा नामक जैविक फफूंदीनाशक 6 ग्राम या कार्बेन्डाजिम नामक फफूंदीनाशक 2 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करें। इसके बाद राइजोबियम कल्चर 5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज दर से उपचारित करने पर उपज में लाभ होता है।

बुआई विधि

अगेती किस्मों के बीज की बुआई के लिए पंक्ति से पंक्ति के मध्य 30 सें.मी. दूरी, जबकी मध्यकालीन एवं पछेती किस्मों के बीज की बुआई के लिए पंक्ति से पंक्ति के मध्य 45 सें.मी. दूरी तथा पौधे से पौधे के मध्य की दूरी 8 से 10 सें.मी. रखनी चाहिए। बुआई से पूर्व खेत में पलेवा करके बोने से बीजों का अच्छा अंकुरण होता है।

खाद एवं उर्वरक

उर्वरक की मात्रा मृदा नमूने की जांच पर निर्भर करती है। अत: बुआई से पूर्व मृदा की जांच अवश्य करवाएं। खेत की तैयारी के समय 200 से 250 क्विंटल प्रति हैक्टर सड़ी हुई गोबर की खाद अच्छी तरह से मिला लें। नाइट्रोजन 25 कि.ग्रा. की एक तिहाई मात्रा, फॉस्फोरस 40 कि.ग्रा. तथा पोटाश 50 कि.ग्रा. की पूर्ण मात्रा प्रति हैक्टर अन्तिम जुताई के समय देनी चाहिए। शेष नाइट्रोजन की मात्रा दो भागों में बुआई के 25 से 30 एवं 40 से 45 दिनों बाद निराई-गुड़ाई करके दें।

सिंचाई

मटर की फसल में सिंचाई जल की तुलनात्मक रूप से कम आवश्यकता होती है। फिर भी 10 से 15 दिनों के अंतराल में 3 से 4 सिंचाइयां करनी जरुरी होती हैं। फसल की पुष्पण, फली बनने एवं दाना बनने की अवस्था में पर्याप्त नमी का होना आवश्यक है।

निराई-गुड़ाई एवं खरपतवार नियंत्रण

फसल वृद्धि की प्रारंभिक अवस्था में खरपतवार शीघ्र ही निकाल देना चाहिए अन्यथा पैदावार पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। फसल में दो निराई-गुड़ाई पहली बुआई के 30 दिनों बाद करनी चाहिए। आवश्यकता पड़ने पर तीसरी निराई-गुड़ाई भी की जा सकती है। निराई-गुड़ाई करने से खरपतवार नष्ट होते हैं। रासायनिक विधि द्वारा खरपतवार नियंत्रण के लिये बासालिन 3 कि.ग्रा. क्रियाशील तत्व प्रति हैक्टर की दर से बुआई से पूर्व 500 से 600 लीटर पानी में घोल बनाकर मृदा पर छिड़काव करें। छिड़काव के समय मृदा में पर्याप्त नमी का होना आवश्यक है।

प्रमुख हानिकारक कीट

फलीछेदक कीट

इसके वयस्क कीट स्लेटी रंग के होते

मृदुरोमिल आसिता

यह रोग *पेरोनोस्पोरा पाइसाइ* नामक कवक से होता है। इस रोग के कारण पत्तियों की ऊपरी सतह पर पीले रंग के धब्बे दिखाई देते हैं, जो बाद में भूरे रंग के हो जाते हैं और अंत में सूख जाते हैं। पत्तियों की निचली सतह पर धब्बे के ठीक नीचे रुई जैसी सफेद या मटमैले रंग की कवक वृद्धि दिखाई पड़ती है। रोग का प्रकोप अधिक होने पर तनों की बढ़वार रुक जाती है। ऐसे तने विकृत हो जाते हैं। रोगी पौधों की बढ़वार रुक जाती है तथा पौध पीले रंग के हो जाते हैं। फलियों पर भी पीले या भूरे रंग के धब्बे दिखाई देते हैं एवं इनका आकार बिगड़ जाता है। रोगी फलियों से प्राप्त दाने सिकुड़े तथा आकार में छोटे होते हैं।

प्रबंधन

- खेत में रोग के लक्षण दिखायी देने पर रिडोमिल एम-जैड दवा 2 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर दो छिड़काव 15-20 दिनों के अंतराल पर करने से रोग पर तुरन्त नियंत्रण किया जा सकता है।

सारणी: मटर की संस्तुत प्रजातियां

प्रजातियां	उत्पादकता (क्विंटल/हैक्टर)	पकने की अवधि (दिन)	उपयुक्त क्षेत्र	विशेषतायें
रचना	20-25	130-135	सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश	लंबे पौधे सफेद बुकनी अवरोधी
इन्द्र के.पी.एम. आर-400	30-32	125-130	बुन्देलखंड एवं मध्य उत्तर प्रदेश	बौने पौधे, दाने सफेद, गोल बुकनी अवरोधी
शिखा के.एफ.पी.डी-103	25-30	125-130	तदैव	पौधे लंबे, दाने सफेद गोल
मालवीय मटर 15	22-32	120-125	सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश	मध्यम बौने पौधे, सफेद चूर्णिल आसिता, पाउडरी मिल्ड्यू रोग अवरोधी प्रजातियां
जे.पी.-885	20-25	130-135	बुन्देलखण्ड के लिए	-
पूसा प्रभात डी.डी.आर-23	15-18	100-105	संपूर्ण उत्तर प्रदेश	बुकनी रोग अवरोधी
पन्त मटर 5	20-25	130-135	मैदानी क्षेत्र	पौधे लंबे, हल्के हरे बुकनी रोगरोधी
आदर्श आईपीएफ 99-25	23-25	130-135	बंदेलखंड के लिए	पौधे लंबे सफेद बुकनी अवरोधी।
विकास आईपीएफडी 99-13	23-25	100-105	तदैव	बौनी सफेद बुकनी अवरोधी।

चने का कीट

इस कीट की मादा अपने जीवनकाल में लगभग 500-1000 तक अण्डे देती है। ये अण्डे 3 से 10 दिनों के अंदर फूट जाते हैं। इनसे चमकीले हरे रंग की सुंडियां निकलती हैं। प्रारम्भिक अवस्था की सूंडी मुख्यत: मटर की पत्तियों, कलियों तथा फूलों को खाती है। बाद में सूंडी विकसित हो रही मटर की फली के अंदर खाती हुई फली के अंदर घुसकर दानों को खा जाती है तथा फली खोखली होने पर पीली पड़कर सूख जाती है। इससे पैदावार पर सीधा प्रभाव पड़ता है। खाते समय इसकी सूंडी का पीछे का आधा भाग फली के बाहर रहता है या प्रारंभ में पूरी सूंडी फली के अंदर घुस जाती है।

प्रबंधन

- सूंडी की प्रथमावस्था दिखाई देते ही 250 एलई के एचएएनपीवी को एक कि.ग्रा. गुड़ तथा 0.1 प्रतिशत टीपोल के घोल का प्रति हैक्टर की दर से 10-12 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करें।
- प्रकोप बढ़ने पर स्पाइनोसैड 45 एससी व थायोमेंक्जाम 70 डब्ल्यूएससी या क्विनालफॉस 25 ई.सी. या क्लोरपायरीफॉस 20 ई.सी. का 2 मि.मी. प्रति लीटर या इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एसएल की 1 मि.मी. प्रति लीटर की दर से छिड़काव करें।

फलीछेदक कीट

हैं तथा मादा कीट समूह में या एक-एक करके अण्डे पौधों की कोमल शाखाओं कलियों अथवा फलियों पर देती हैं। अण्डे से निकलकर सुंडियां पत्तियों पर घूमकर फूल व कली को खाती हैं। उसके बाद विकसित हो रही फली के अंदर दानों को खाती रहती हैं। एक सूंडी 15-20 फलियों को नुकसान पहंचाती है।

प्रबंधन

- 5 प्रतिशत एन.एस.के.ई. का छिड़काव करें।
- अधिक प्रकोप होने पर या एक सूंडी प्रति 2 पौधा से अधिक होने पर डाइमेथोएट 30 ई.सी. की 1.25 लीटर मात्रा का 500-600 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

पर्ण सुरंगक कीट

इस कीट की मैगट अवस्था ही हानिकारक होती है। ये पत्तियों में सुरंग बनाकर हरे भाग को अंदर ही अंदर खाते रहते हैं। इन्हें पत्तियों के ऊपर सतह पर धूसर रंग की सुरंगों के रूप में देखा जा सकता है। इससे प्रकाश संश्लेषण क्रिया प्रभावित होती है।

प्रबंधन

- अधिक प्रकोप होने पर इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. की 0.5 मि.ली. प्रति लीटर या डाईमेथोएट 30 ई.सी. की 1.25 लीटर मात्रा का 800 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें।

तना मक्खी

यह छोटी एवं काले रंग की मक्खी है। इसके अण्डों से 2-4 दिनों में मैगट निकल आते हैं, जो पत्तियों में सुरंग बनाकर मध्यशिरा से होते हुए तने में प्रवेश कर जाते हैं। अण्डे से निकलने के बाद ये पत्तियों में सुरंग बनाते हुए तने में प्रवेश कर जाते हैं तथा अंदर तने को खाते रहते हैं। इससे तना सूख जाता है।

प्रबंधन

प्रकोप होने पर डाइमेथोएट 30 ई.सी. की 1.25 लीटर या इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. की 0.5 मि.ली. प्रति लीटर मात्रा का 600-800 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करना चाहिये।

तना मक्खी

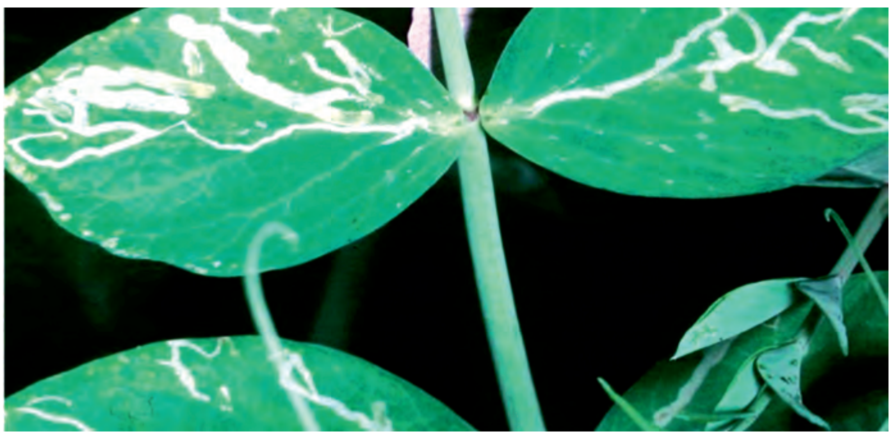

पर्ण सुरंगक कीट का प्रकोप

प्रमुख रोग

बीज सड़न, पौध गलन या आर्द्रपतन

यह रोग *पीथियम राइजोक्टोनिया* आदि प्रजाति के फफूंदों द्वारा होता है। बीज का अंकुरण न होना, अंकुरण के बाद भूमिगत बीजांकुर का विगलन होना अथवा बीजांकुर का भूमि से बाहर निकलने पर पौध गलन होना, इस रोग के मुख्य लक्षण हैं। इस रोग से संक्रमित बीज भूरे से काले रंग का हो जाता है तथा मुलायम होकर सड़ जाता है। बीज अंकुरित नहीं होता। बीजांकुर के भूमि से बाहर आने पर रोग के लक्षण आसानी से देखे जा सकते हैं।

बीज सड़न, पौध गलन या आर्द्रपतन

प्रबंधन

- बीज को कवकनाशी रसायन थीरम 2.5 ग्राम तथा कार्बेन्डाजिम 1 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से मिलाकर उपचारित करें।
- बीज को ट्राइकोडर्मा द्वारा 10 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करें।

चूर्णिल आसिता

यह रोग *ऐरीसाइफी पोलीगोनइ* नामक फफूंद से होता है। रोग के प्रारम्भिक लक्षण पत्तियों पर सफेद चूर्णिल धब्बे के रूप में प्रकट होते हैं। रोग के लक्षण क्रमशः तने, फली और पौधे के अन्य भागों पर फैल जाते हैं। ये चूर्ण जैसे धब्बे पत्तियों के दोनों सतहों पर बिखरे होते हैं। रोगग्रसित फलियों पर काले-भूरे रंग सिकुड़े हुए धब्बे दिखाई देते हैं। इससे रोग का संक्रमण बीजों तक भी पहुंच जाता है।

प्रबंधन

- रोग के लक्षण दिखायी देने पर 25 से 30 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से गंधक चूर्ण का भुरकाव करें। इसके अलावा सल्फैक्स (2.5 ग्रमा प्रति लीटर पानी) या इलोसाल (5 ग्राम प्रति लीटर पानी) अथवा थायोविट (5 ग्राम प्रति लीटर पानी), मिल्ड्रेक्स या मिलस्टेम अथवा कोसान (2 ग्राम प्रति लीटर पानी), मोरोसाइड (1 ग्राम प्रति लीटर पानी), इनमें से जो भी दवा उपलब्ध हो, उसका छिड़काव करें। प्रथम छिड़काव रोग के लक्षण दिखायी देने पर एवं दूसरा छिड़काव 12 से 15 दिनों के बाद करें।

चूर्णिल आसिता का संक्रमण

तना विगलन एवं अंगमारी

यह रोग *ऐस्कोकाइटा पाइसाइ ऐस्कोकाइटा पाइनोडेला* तथा *ऐस्कोकाइटा पाइनोडीज* नामक फफूंद से होता है। प्रारंभ में तद विगलन के लक्षण गहरे भूरे रंग के दाग के रूप में बीज बोने के बाद उगे हुए नए पौधों के तनों पर दिखाई देते हैं। ये जमीन की सतह के पास से शुरू होकर नीचे की तरफ तथा धीरे-धीरे जड़ों और ऊपर की ओर बढ़ते हैं। इस दाग का रंग बाद में काला हो जाता है और अंत में पौधा सूख जाता है।

प्रबंधन

- बुआई से पूर्व बीज को थीरम 2.5 ग्राम तथा कार्बेन्डाजिम 1 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित कर लें।
- खड़ी फसल पर मैन्कोजेब 2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए। पहला छिड़काव रोग के लक्षण दिखाई पड़ते ही शुरू कर देना चाहिए तथा कुल 4-5 छिड़काव 10-12 दिनों के अंतराल पर करने चाहिए।

तना विगलन एवं अंगमारी रोग का प्रभाव

फ्यूजेरियम जड़सड़न

फ्यूजेरियम सोलेनाइ उपजाति *पाइसाइ* नामक फफूंद से होने वाले इस रोग का प्रभाव अगेती बोई जाने वाली फसल पर अधिक होता है। रोगी पौधों की पत्तियों का नष्ट होना ही इस रोग की प्रमुख पहचान है। जमीन की सतह के पास तने और मुख्य जड़ों पर लंबे आकार के लाल भूरे रंग के कुछ धंसे हुए घाव दिखाई पड़ते हैं। रोगी पौधों की जड़ें सड़ जाती हैं। नम वातावरण में रोगग्रस्त जड़ों व जमीन की सतह के पास तनों पर कवक की सफेद या हल्की गुलाबी रंग की बढ़वार दिखाई पड़ती है।

प्रबंधन

- बीज को बोने से पहले समय थीरम 2.5 ग्राम तथा कार्बेन्डाजिम 1 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित कर लें।

मोजेक

इस रोग के कारण पौधे पीले कमजोर एवं छोटे दिखाई पड़ते हैं। पुरानी पत्तियों पर सफेद अनियमित क्षेत्र बनते हैं। पतान असामान्य रूप से कुंचित और शीर्षस्थ पत्तियां मुड़ी हुई हो जाती हैं। पर्णवृंत एवं पतान पर हल्के भूरे छोटे-छोटे बदरंग दाग बनते हैं। स्वस्थ पौधों की अपेक्षा रोगी पौधों में फूल देर से आते हैं। रोगी पौधों में फलियां छोटी और संख्या में कम होती हैं तथा फलियों के अंदर बनने वाले बीजों की संख्या कम होती है।

प्रबंधन

- पौध अवस्था से ही कीटनाशी ऑक्सीडेमेटोन मिथाइल या डाइमिथोएट का एक मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करें। कुल 5-6 छिड़काव 10 दिनों के अंतराल पर करना लाभकारी होता है। यह छिड़काव फल तोड़ने के 20 दिनों पहले बन्द कर देना चाहिए।

उपज

फलियों की तुड़ाई बुआई के लगभग 45 से 50 दिनों के बाद फलियों के पूर्ण भरने पर करनी चाहिए। फलियों की तुड़ाई 8 से 10 दिनों के अंतराल में 3 से 4 बार करनी चाहिए। अगेती किस्मों से औसत उपज 25 से 40 क्विंटल एवं देरी से बोई जाने वाली किस्मों से औसत उपज 80 से 100 क्विंटल प्रति हैक्टर हरी फलियां प्राप्त कर सकते हैं।

सफलता गाथा

ढिंगरी मशरूम उत्पादन बना आय का स्रोत

ब्रज किशोर प्रजापति*, **एस.के. जाटव***, **आर.एल. राऊत***, **मुरलीधर इंगले***, **सुखलाल वास्केल*** और **जितेन्द्र मर्सकोले***

कृषि विविधता द्वारा खाद्य प्रणाली में स्थिरता आ सकती है। मशरूम इसी कड़ी का एक घटक है, जो न सिर्फ कृषि विविधता को बल्कि गुणवत्तायुक्त खाद्य पदार्थ एवं ग्रामीण युवाओं के बेरोजगारी की समस्या का समाधान भी है। आजकल लोग अपने स्वास्थ्य पर ज्यादा ध्यान देने लगे हैं। इस लिए मशरूम को अपने दैनिक भोजन में शामिल करने लगे हैं। इसकी वजह से बाजार में ढिंगरी मशरूम की लगातार मांग बढ़ रही है। उच्च उत्पादकता और अच्छे मूल्य के कारण अनेक किसान ढिंगरी मशरूम की व्यावसायिक खेती में रुचि दिखा रहे हैं। स्टार्ट-अप किसानों के लिए ढिंगरी की खेती करना एक अच्छा विकल्प है, क्योंकि अन्य प्रजातियों की तुलना में इसमें प्रारम्भिक निवेश कम है। विभिन्न किस्मों के साथ विविध पोषाधार पर और भिन्न जलवायु में इसकी फलने की अनुकूलता ने मशरूम को व्यापक स्तर पर लोकप्रिय बनाया है।

एक स्त्री प्राय: घरेलू काम तक ही सीमित रहती है, लेकिन किसी लक्ष्य को पाने की चाह अगर कर ले, तो उसे समाज की बेड़ियां न तो बांध सकती हैं और न ही उसे कोई रोक सकता है। जनपद बालाघाट (मध्य प्रदेश) के किरनापुर विकासखण्ड में एक गांव किरनापुर है। इसी गांव की निवासी श्रीमती अर्चना सारंगपुरे (उम्र लगभग 40 वर्ष पति श्री अरविंद सारंगपुरे), भूमिहीन होने के कारण अपने पति के साथ होटल चलाकर अपने परिवार का जीवनव्यापन करती हैं। तीन वर्ष पूर्व वह किसान मेले में मशरूम की खेती देखकर बड़ी उत्साहित हुईं और इसकी खेती करने की सोची, जिसमें परिवार वालों ने भरपूर साथ दिया। वर्ष 2017-18 में पहली बार मशरूम की खेती करने के पश्चात जब वे पूर्णत: सफल नहीं हुई, तब उन्हें तकनीकी ज्ञान की आवश्यकता महसूस हुई। वर्ष 2018-19 में कृषि विज्ञान केन्द्र, बड़गांव, बालाघाट में भारतीय कृषि कौशल विकास परिषद् द्वारा आयोजित मशरूम उत्पादन पर प्रशिक्षण कार्यक्रम में श्रीमती अर्चना सारंगपुरे ने अपने पति के साथ बढ़-चढ़कर प्रशिक्षण में भाग लिया। इसमें केन्द्र के वैज्ञानिकों द्वारा मशरूम उत्पादन के संदर्भ में विस्तार से जानकारी दी गई। वैज्ञानिकों द्वारा दी गई जानकारी के अनुसार ढिंगरी मशरूम के उत्पादन के लिए उन्होंने मार्च-अप्रैल में गेहूं कटाई के उपरांत निकले भूसे को इकट्ठा करके अक्टूबर से मशरूम उत्पादन का कार्य प्रारंभ किया। प्रशिक्षण में बताई गई जानकारी के अनुसार 100 लीटर ड्रम या टब में 90 लीटर पानी में लगभग 20-25 कि.ग्रा. सूखे भूसे को गीला कर दिया जाता है। इसके बाद एक प्लास्टिक की बाल्टी में 10 लीटर पानी तथा 7.5-10 ग्राम बावस्टीन तथा फार्मेलीन (125-150 मि.ली.) का घोल बनाकर भूसे वाले ड्रम के ऊपर उड़ेल दिया जाता है। इसके बाद ड्रम को पॉलीथीन शीट या ढक्कन से अच्छी तरह से बंद कर दिया जाता है। लगभग 14-16 घंटे बाद उपचारित भूसे को ड्रम से बाहर किसी प्लास्टिक की शीट या लोहे की जाली पर डालकर 2-4 घंटों के लिए छोड़ दिया जाता है। इससे अतिरिक्त पानी बाहर निकल जायेगा तथा फॉर्मलीन की गंध भी खत्म हो जायेगी। प्रति 2-3 कि.ग्रा. गीले भूसे में लगभग 80-100 ग्राम बीज अच्छी तरह से मिला कर पॉलीथीन की थैलियों (40-45 सें.मी. लंबाई व 30-35 सें.मी. चौड़ाई) में भर देना चाहिए। पॉलीथीन में लगभग 1/2 सें.मी. के 10-12 छेदकर देने चाहिए, जिससे बैग का तापमान 30 डिग्री सेल्सियस से अधिक न होने पाए और हवा का आवागम हो सके।

इन सभी तकनीकों को अपनाकर वर्ष 2019-20 के पांच महीनों में 23,290 रुपये लागत लगाने के बाद कुल आमदनी 46,500 रुपये एवं शुद्ध लाभ 22,150 रुपये प्राप्त हुआ। कृषि में विविधता को अपनाकर अतिरिक्त आय की जा सकती है। इसके अतिरिक्त कभी-कभी ताजा मशरूम विक्रय नहीं हो पाता था, इस समस्या को केन्द्र के वैज्ञानिकों के साथ साझा करने के उपरांत मशरूम अचार, मशरूम पाउडर, मशरूम पापड़, मशरूम मुरब्बा एवं मशरूम पाउडर का परिरक्षण कर 300-500 रुपये प्रति कि.ग्रा. की दर से बाजार में विक्रय करती हैं, जिससे अतिरिक्त मुनाफा प्राप्त हो रहा है। इसके साथ-साथ अन्य कृषकों को मशरूम उत्पादन से जोड़कर उन्हें रोजगार भी प्रदान करती हैं। ■

*कृषि विज्ञान केन्द्र, बालाघाट (मध्य प्रदेश)

बागों में मानसून के कार्यकलाप

राम रोशन शर्मा* और **हरे कृष्णा****

भारत में खेती मुख्य रूप से हर वर्ष होने वाली वर्षा पर निर्भर करती है। अतः मानसून के आगमन के संकेत भर से ही सभी का हृदय प्रफुल्लित हो उठता है, विशेषकर कृषकों का, जिनके लिए इस वर्षा का अनन्य महत्व है। जुलाई-अगस्त की द्विमाही में होने वाली वर्षा, जहां गर्मी की तपिश से राहत दिलाती है, वहीं दूसरी ओर फल-वृक्षों के बागों में खरपतवारों, विभिन्न रोगों एवं कीटों का प्रकोप भी बढ़ जाता है। फलों के सफल उत्पादन हेतु उद्यान में नित्य की जाने वाली कृषि क्रियाओं का विशेष महत्व है। अतः इस द्विमाही में बागों में पानी के निकास की समुचित व्यवस्था करनी जरूरी है। सदैव हरे रहने वाले फल-वृक्षों के नये बागों को लगाने का कार्य भी समाप्त करना आवश्यक होता है। विभिन्न फल-वृक्षों के बागों में इस द्विमाही में किए जाने वाले कृषि कार्यों का समुचित विवरण प्रस्तुत है।

सावन की बहार, चला आम बाजार

मध्यम पकने वाली किस्मों के फलों को तोड़कर जुलाई में बाजार भेजने की समुचित व्यवस्था करें। फलों को 10 मि.मी. डंठल के साथ प्रातःकाल अथवा संध्याकाल में तोड़ना चाहिए। तुड़ाई के तुरंत पश्चात डिसैपिंग (डंठल से निकलने वाले स्राव को पृथक करना) करना चाहिए, जिससे फलों की गुणवत्ता बनी रहती है। तुड़ाई उपरांत फलों का श्रेणीकरण कर एवं कटे-फटे खराब फलों को अलग कर लेना चाहिए। फलों के परिपक्वन में एकरूपता लाने के लिए उन्हें ईथरेल 700 पीपीएम + कार्बेण्डाजिम 500 पीपीएम के 52±1 डिग्री सेल्सियस गुनगुने पानी के घोल में 5 मिनट के लिए उपचारित करना चाहिए। बौनी किस्मों में फसल की तुड़ाई सिकेटियर

पके आम

*खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग, भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012; **भाकृअनुप-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी-221001 (उत्तर प्रदेश)

केले में अबकी बारी, करें रोपण की तैयारी

जुलाई में पौधों से अवांछित पत्तियों को निकाल दें। पौधों के तनों के चारों ओर यदि मिट्‌टी नहीं चढ़ाई गई हो, तो जुलाई के प्रारंभ में यह कार्य अवश्य पूरा कर लें जिससे जल निकास का उचित प्रबंधन हो सके। जिन पौधों में फल लगे हों उन्हें बांस से बांधकर सहारा देना लाभप्रद रहता है। नए बाग लगाने का कार्य भी इस माह किया जा सकता है। इसके लिए तलवार की शक्ल के अंत:भूस्तारी अच्छे समझे जाते हैं। अंत:भूस्तारियों को रोगमुक्त मातृ पौधों से ही चयनित करें। भूस्तारी 3-5 माह पुराने, आकार में एक समान एवं छोटी अवधि वाली किस्मों जैसे नेन्द्रन, रस्थाली, पूवन, नेय पूवन, वजन में 1-1.5 कि.ग्रा. के तथा लंबी अवधि वाली किस्मों, कर्पूरवल्ली व लाल केला के लिए, 1.5-2.0 कि.ग्रा. के होने चाहिए। यदि रोपण हेतु सूक्ष्म प्रवर्धित पौधों को लेना है तो 30 सें.मी. लंबे द्वितीयक दृढ़ीकृत, पांच सें.मी. मोटाई लिए कम से कम 5 पूरी तरह से खुले हुये स्वस्थ पत्तों वाले पौधों का ही चुनाव करें। चयनित भूस्तारियों के किसी भी सड़े हुए भाग को हटाने के लिए सतही परतों के साथ-साथ सभी जड़ों को भी खुरचकर दिया जाना चाहिए। फ्यूजेरियम म्लानि रोग से बचाव हेतु रोगनिरोधी उपाय के रूप में 0.2 प्रतिशत कार्बेन्डाजिम के घोल में छिले हुये भूस्तारियों को 15-20 मिनट तक डुबोकर रखें। उपचारित पौधों को रात भर छाया में रखें तथा अगले दिन रोपण करें।

द्वारा तथा ओजस्वी किस्मों में 'मैंगो हार्वेस्टर' का उपयोग करनी चाहिए।

तनाछेदक और पत्तियों को हानि पहुंचाने वाले कीटों से रोकथाम के लिए डेल्टामेथ्रिन (0.2 प्रतिशत) अथवा मोनोक्रोटोफॉस (0.05 प्रतिशत) का छिड़काव करें। जुलाई के दूसरे पखवाड़े में फलों की तुड़ाई के बाद प्रति वृक्ष 500 ग्राम की दर से नाइट्रोजन देनी चाहिए। एंथ्रेक्नोज से बचाव के लिए 0.125 प्रतिशत (125 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी) ब्लिटॉक्स के घोल का छिड़काव करें। यदि बरसात पर्याप्त हो, तो मई-जून में खोदे गए गड्ढों में रोपाई का कार्य भी इसी माह शुरू किया जा सकता है। ध्यान रहे कि रोपाई का कार्य सायंकाल अथवा जिस दिन हल्की-हल्की बरसात हो रही हो, उसी दिन करना चाहिए। रोपाई के बाद पौधों के चारों तरफ की मिट्‌टी को अच्छी तरह से दबा दें और उसके तुरंत बाद हल्की सिंचाई अवश्य करें। नया बाग लगाते समय दो या तीन किस्मों को साथ लगाया जाए। उत्तरी भारत की प्रमुख किस्मों जैसे-दशहरी, लंगड़ा, चौसा और बॉम्बे ग्रीन आदि में स्व-अनिषेच्यता की समस्या पाई जाती है। जिन किस्मों में यह समस्या होती है, उनके फूल के पुंकेसर द्वारा पैदा किए हुए परागकण अपने ही स्त्रीकेसर को निषेचित नहीं कर सकते, जिससे उनमें फल नहीं लगते। परंतु दूसरी किस्म के परागकण निषेचित कर देते हैं। अत: ऐसी स्थिति में एक ही किस्म का बाग लगाया जाए, तो वे बाग फलरहित रह जाते हैं। इस समस्या के निवारण हेतु दशहरी के बाग में बॉम्बे ग्रीन व लंगड़ा और चौसा के बाग में दशहरी, सफेदा और मलीहाबादी किस्मों का लगाना ही लाभदायक रहता है। यह माह विनियर कलम द्वारा पौधों को तैयार करने के लिए सबसे उपयुक्त समय है।

अगस्त में पछेती पकने वाली किस्मों के फलों की तुड़ाई करें तथा श्यामव्रण (एंथ्रोक्नोज) से बचाव के लिए ब्लिटॉक्स का दूसरा छिड़काव करें। वृक्षों में गोंदार्ति की समस्या हो, तो कॉपर आक्सीक्लोराइड (0.2 प्रतिशत) + बुझा हुआ चूना (0.1 प्रतिशत) + बोरेक्स (0.4 प्रतिशत) मिश्रण के घोल का ऊपर से छिड़काव करें। तराई क्षेत्रों में गांठ बनाने वाले कीटों (शूट गाल मेकर) से बचाव हेतु मोनोक्रोटोफॉस (0.05 प्रतिशत) अथवा डाइमेथोएट (0.06 प्रतिशत) का छिड़काव करें। अगले वर्ष में नए पौधे तैयार करने के लिए मूलवृंत हेतु फलों की गुठलियों को एकत्रित करके पौधशाला में बुआई करें। यदि जुलाई में किसी कारणवश विनियर कलम न की जा सकी हो, तो अगस्त में कलम करना न भूलें।

पपीते का विकास, चाहे समुचित जल निकास

जुलाई में मैदानी क्षेत्रों के बागवान पपीते की पौध तैयार कर सकते हैं। किसी अच्छी किस्म का बीज चयन करके उसे किसी कवकनाशी से उपचारित करें। उपचारित बीजों

पपीते में पुष्पण

कटहल से मुनाफा, करे आमदनी में इजाफा

जुलाई में तैयार कटहल के फलों को तोड़कर बाजार भेजने की समुचित व्यवस्था करें। बागों में समुचित जल निकास का प्रबंध होना चाहिए। नए बाग लगाने का कार्य भी इसी माह प्रारंभ कर दें। अगस्त में नर्सरी तैयार करने के लिए बीजों को फलों से निकाल कर पौधशाला में बोएं। गूटी द्वारा पौधे तैयार करने का भी यही उत्तम समय है।

को ऊंची उठी हुई क्यारियों में बोना चाहिए। पौधशाला में बीजों/पौधों को आर्द्रपतन रोग से बचाने के लिए क्यारियों को बुआई से 15 दिनों पहले ही 2.5 प्रतिशत फार्मेल्डिहाइड के घोल से उपचारित करने के 48 घंटे बाद पॉलीथीन से ढककर कीटाणुरहित कर लें। पुराने बाग खरपतवाररहित होने चाहिए तथा उनमें जल निकास की अति उत्तम व्यवस्था होनी चाहिए। सड़न रोग की रोकथाम के लिए ब्लिटॉक्स (0.3 प्रतिशत) के घोल का छिड़काव पौधों के तनों एवं थालों में अवश्य करें एवं पौधों के तनों के चारों ओर मिट्टी चढ़ा दें। बीजों के अंकुरण के बाद थीरम (0.2 प्रतिशत) के घोल का छिड़काव करें। उद्यान में जल निकास की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए।

सावन की बयार, अमरूद चाहे प्यार-दुलार

जुलाई का माह बाग में रोपण, रिक्त स्थानों की पूर्ति एवं पौधे तैयार करने के लिए आदर्श होता है। गूटी या कलम से तैयार अमरूद के पौधों को मृदा गेंद के साथ 45×45×45 सें.मी. के पहले से खुदे गड्ढों के बीचों-बीच रोपित करना चाहिए। रोपित पौधों को तुरंत सिंचित करना चाहिए। इसके बाद तीसरे दिन और फिर प्रत्येक 10 दिनों के अंतराल पर अथवा आवश्यकतानुसार पानी देना चाहिए। श्यामव्रण रोग को नियंत्रित करने के लिए, कार्बेण्डाजिम (2 ग्राम प्रति लीटर) का फलों पर और बोर्डो मिश्रण (3:3:50) अथवा कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (3 ग्राम प्रति लीटर) का तनों तथा पत्तियों पर छिड़काव करें। पुराने या स्थापित बगीचों में 0.3 प्रतिशत बोरेक्स का 15 दिनों के अंतराल पर दो बार छिड़काव करें। बाग में कीटों का प्रकोप होने पर क्विनाल्फोस 25 ई.सी. का 2 मि.ली. प्रति लीटर या मोनोक्रोटोफॉस का 2 मि.ली. प्रति लीटर या नीम तेल का 3 प्रतिशत की दर से 21 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करें। सर्दियों के मौसम वाली फसल के लिए, फूल आने से पहले 0.4 प्रतिशत बोरिक एसिड का छिड़काव करें। इससे फलों के आकार और उपज में वृद्धि हो सकती है। फलों के वर्तिकाग्र सड़न की रोकथाम के लिए कार्बेण्डाजिम (2 ग्राम प्रति लीटर) अथवा कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (3 ग्राम प्रति लीटर) का फलन से पहले छिड़काव करें। हालांकि ध्यान रखा जाना चाहिए कि कोई भी छिड़काव तुड़ाई के 15 दिनों पहले नहीं किया जाये।

अगस्त में, फल मक्खी के प्रकोप को कम करने के लिए गिरे हुए तथा ग्रसित फलों को नष्ट कर देना चाहिए। छेदक कीटों से भी अमरूद के बागों को काफी क्षति होती है। इससे बचाव के लिए बागों में नियमित रूप से कीटों को एकत्रित कर उन्हें नष्ट कर देना चाहिए। इसके अतिरिक्त, कीटनाशकों का फलन के समय या फलों के पकने से पहले छिड़काव करें। सूक्ष्म पोषक तत्वों जैसे-जिंक, लौह, तांबा, मैंगनीज इत्यादि के मिश्रण का भी 2 मि.ली. प्रति लीटर की दर से पौधों पर छिड़काव करें। म्लानि अथवा विल्ट से पौधों को बचाने के लिए उद्यान में निरंतर साफ-सफाई करते रहें। इसके अतिरिक्त, नीम केक, जैविक खाद इत्यादि का भरपूर प्रयोग करें एवं बाग में निकासी समुचित व्यवस्था सुनिश्चित करें।

अमरूद

आंवले का प्रवर्धन, करें आमदनी में वर्धन

आंवला

जुलाई-अगस्त में आंवला के बीजों की बुआई कर सकते हैं। अंकुरित पौधों को एक महीने बाद क्यारियों में स्थानांतरित किया जा सकता है, जहां वे अगले वर्ष जुलाई तक प्रवर्धन के लिए तैयार हो जाते हैं। जुलाई-अगस्त में ही आंवला में पैबंदी कलिकायन या विरूपित छल्ला विधि द्वारा प्रवर्धन किया जा सकता है। सांकुर शाखा का चुनाव ऐसे मातृवृक्ष से करना चाहिए, जो अधिक फलत देने वाला हो तथा कीटों एवं व्याधियों के प्रकोप से मुक्त हो। जुलाई-अगस्त में ही कलिकायन के द्वारा तैयार पौधों को 8-10 मीटर (किस्म के अनुसार) की दूरी

पर उद्यान में रोपित कर सकते हैं। नाइट्रोजन की आधी मात्रा जुलाई-अगस्त में आंवला में डालनी चाहिए। आंवले का रस्ट रोग आंवले की एक महत्वपूर्ण समस्या है। इसके नियंत्रण के लिए, घुलनशील गंधक (0.4 प्रतिशत) या क्लोरथैलोनिल (0.2 प्रतिशत) का तीन छिड़काव एक माह के अंतराल पर जुलाई से करने पर रोग पर नियंत्रण पाया जा सकता है। श्यामव्रण, आंवले की पत्तियों व फलों पर अगस्त से दिखाई देना प्रारंभ हो जाता है। इसके प्रबंधन हेतु, कार्बेण्डाजिम (0.1 प्रतिशत) का तुड़ाई से 15 दिन पूर्व छिड़काव करें। जुलाई-अगस्त में गुठलीछेदक का प्रकोप भी देखा जा सकता है। इसके नियंत्रण के लिए क्विनाल्फॉस या सेविन का 2 मि.ली. प्रति लीटर की दर से छिड़काव करें।

बरखा में बदरा छाई, आओ करें खजूर की तुड़ाई

खजूर में इस दौरान फलों की तुड़ाई का कार्य होता है। वर्षा प्रारंभ होने के कारण खजूर पूरी तरह से नहीं पक पाते हैं। अतः

खजूर

उन्हें डोका अथवा प्रारम्भिक डांग अवस्था पर तोड़ लेना चाहिए। वातावरण में नमी के कारण तोड़े हुये फलों में फफूंद लगने की आशंका रहती है। अतः उन्हें शीघ्रातिशीघ्र प्रसंस्करण के लिए ले जाना चाहिए।

वर्षा की फुहार, लाये अनार में बहार

जुलाई-अगस्त में पौध रोपण करना चाहिए तथा रोपण के तुरंत बाद सिंचाई कर लें। मृग बहार हेतु, अनार के पौधों में दी जाने वाली गोबर की खाद तथा फॉस्फोरस की पूरी एवं नाइट्रोजन और पोटाश की आधी मात्रा जुलाई में देनी चाहिए। खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग छत्रक के नीचे चारों ओर 8-10 सें.मी. गहरी खाई बनाकर करना चाहिए। यदि गूटी द्वारा अनार का प्रवर्धन करना हो, तो जुलाई-अगस्त में एक वर्ष पुरानी पेन्सिल समान मोटाई वाली स्वस्थ, ओजस्वी, परिपक्व, 45-60 सें.मी. लम्बाई की शाखा का चयन कर लेना चाहिए। चुनी गई शाखा

अनार में गूटी

से कलिका के नीचे 3 सें.मी. चौड़ी गोलाई में छाल पूर्णरूप से अलग कर देनी चाहिए। छाल निकाली गई शाखा के ऊपरी भाग में आई.बी.ए. 10000 पी.पी.एम. का लेप लगाकर नमीयुक्त स्फेगनम मॉस चारों और लगाकर पॉलीथीन शीट से ढककर सुतली से बांधना चाहिए। इसके बाद जब पॉलीथीन से जड़ें दिखाई देने लगें, उस समय शाखा को काटकर क्यारी में स्थापित कर लें। तेलिया रोग से संक्रमित क्षेत्रों में मृग बहार नहीं लिया जाना चाहिए, अन्यथा जुलाई से अगस्त के दौरान रासायनिक जैवनाशियों, सलिसिलिक अम्ल, बोरॉन, कैल्शियम इत्यादि का नियमित रूप से प्रयोग करना पड़ेगा। यदि उद्यान में माहूं कीट का प्रकोप हो तो प्रोफेनाफॉस-50 का 2 मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। अधिक प्रकोप होने की स्थिति में इमिडाक्लोप्रिड 0.3 मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। अनार में फलों का फटना एक गंभीर समस्या है, जोकि शुष्क क्षेत्रों में अधिक होती है। इसके प्रबंधन हेतु, नियमित रूप से सिंचाई करें एवं जिब्रेलिक अम्ल (जी.ए. 3) 15 पी.पी.एम. तथा बोरॉन 0.2 प्रतिशत का छिड़काव करें।

बाजार भेजने की करें तैयारी, अंगूर पहुंचे शहर-गांव-गलियारी

अंगूर

जुलाई में मध्यम या देर से पकने वाली किस्मों के फलों की तुड़ाई के बाद बाजार में भेजने की व्यवस्था करें। इस माह में फलों के फटने व सड़ने की समस्या आती है। इसके बचाव के लिए ब्लिटॉक्स (0.3 प्रतिशत) के घोल का छिड़काव अवश्य करें। इसी दौरान फलों को चिड़ियों एवं बर्रों से बचाना चाहिए। फलों को चिड़ियों से बचाने के लिए चमकीले रिबन (पट्टियां) का उपयोग करना चाहिए

बागों में आई बरखा-बहार, लीची की करें विशेष मनुहार

जुलाई में पेड़ के नीचे की जमीन को हमेशा साफ रखें एवं जल निकास की समुचित व्यवस्था करें। नए बाग लगाने एवं गूटी द्वारा पौधे तैयार करने का कार्य भी बागवान इसी माह शुरू कर सकते हैं। जुलाई में पौधों में खाद व उर्वरक की समुचित व्यवस्था करें। यदि जुलाई में गूटी न बांधी गई हो, तो यह कार्य अगस्त में समाप्त कर लें तथा बाग को खरपतवारों से मुक्त रखें। पुराने बागों में तनाछेदक कीट की समस्या रहती है। अगस्त में इस कीट की रोकथाम के लिए लीची में सुझाई गई विधि का प्रयोग करें। इन्हीं दिनों गूटी द्वारा तैयार किए गए पौधों को पौधशाला में अवश्य लगाएं।

या गुच्छों में हरी थैलियां लगा दें। बर्र के छत्तों को नष्ट करने का उपाय करें। फलों की तुड़ाई के बाद खाद व उर्वरक देने की व्यवस्था करें। अगस्त में एंथ्रेक्नोज रोग का भय रहता है। अतः समय रहते ही इसकी रोकथाम के लिए बाविस्टिन (0.2 प्रतिशत) के घोल का छिड़काव करें।

लोकाट की सेवा, देती मेवा

जुलाई में काट-छांट का कार्य समाप्त कर लेना चाहिए। पेड़ों के नीचे की जमीन साफ कर बाग को खरपतवाररहित रखें। अगस्त में गूटी बांधने का कार्य समाप्त कर लें। इसी माह नए बाग लगाने का कार्य भी कर सकते हैं।

शुष्क क्षेत्रों में जल वर्षा, बेर उत्पादकों का मन हर्षा

जून में काट-छांट के बाद यदि नाइट्रोजन किसी कारणवश न दी जा सकी हो, तो उसे जुलाई में अवश्य दें। बाग में जल निकास की समुचित व्यवस्था करें। पौधशाला में बीजू पौधे तैयार करने के लिए यदि बुआई न की जा सकी हो, तो इसे जुलाई में अवश्य करें। यदि पेड़ों पर चूर्णिल रोग के लक्षण दिखें तो केराथेन (0.1 प्रतिशत) के दो छिड़काव अगस्त में अवश्य करें।

नीबूवर्गीय फल

जुलाई में लेमन व लाइम के फल

वर्षा में बहते प्रपात-निर्झरी, पहाड़ों में लगाएं स्ट्रॉबेरी

पहाड़ों में स्ट्रॉबेरी के पौधे जुलाई-अगस्त में लगाए जा सकते हैं। यदि समुचित बरसात न हो, तो क्यारियों में पानी की उचित व्यवस्था करें। सितम्बर में उचित पलवार (मल्च) की व्यवस्था करें। खेत की अच्छी तरह जुताई करके एवं गोबर आदि खाद मिला करके 6×1×15 मीटर आकार की क्यारियां बना लें एवं 15×15 या 15×30 या 30×30 सें.मी. की दूरी पर पौधे लगाएं।

नीबू में कैंकर

पककर तैयार हो जाते हैं। उन्हें तोड़कर बाजार भेजने की व्यवस्था करें। इसी माह नया बाग लगाने का कार्य भी कर सकते हैं। कैंकर रोग से छुटकारा पाने के लिए स्ट्रेप्टोसाइक्लिन (250 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी में) और नीम की खली (5 कि.ग्रा./100 लीटर पानी में) के घोल का छिड़काव करें। जल निकास की उचित व्यवस्था करें। रोपाई का कार्य यदि जुलाई में न हो सका हो, तो अगस्त में इसे पूरा करें। पर्णसुरंगी कीट से बचाव के लिए पौधशाला में रोगोर या मेटासिस्टॉक्स (300 मि.ली./100 लीटर पानी) का छिड़काव करें। फलों की तुड़ाई-पूर्व गिरना एक गंभीर समस्या है। अतः अगस्त में 10 पी.पी.एम. 2,4डी (1 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी) का छिड़काव करें। सितम्बर में नाइट्रोजन की तीसरी मात्रा पौधों को अवश्य दें। इन फल वृक्षों में लगभग सभी सूक्ष्म तत्वों की विशेष कमी पाई जाती है। इनकी पूर्ति के लिए जिंक सल्फेट, मैग्नीशियम सल्फेट, बोरिक अम्ल, बुझा हुआ चूना (प्रत्येक एक कि.ग्रा./450 लीटर पानी) आदि के संयुक्त घोल का छिड़काव करें। इस घोल में यदि 5 कि.ग्रा. यूरिया डाल लें, तो यह नाइट्रोजन की कमी को पूरा करता है।

तुड़ाई को तैयार, सेब अबकी बार

जल निकास की समुचित व्यवस्था के

सेंजोस स्केल कीट से ग्रसित सेब की टहनी

साथ अगेती पकने वाली किस्मों को तोड़कर बाजार में भेजने की व्यवस्था करें। कज्जली धब्बा का प्रकोप होने पर डाइथेन-जेड 78 (0.2 प्रतिशत) घोल का छिड़काव लाभप्रद रहता है। इसी माह नए पौधे तैयार करने के लिए कलम चढ़ाएं। अगस्त में डिलीशियस किस्में पककर तैयार हो जाती हैं। उन्हें अच्छी एवं सुंदर पैकिंग कर बाजार भेजने की व्यवस्था करें। रूईया एवं सेंजोस स्केल आदि कीटों की रोकथाम के लिए सितम्बर में मेटासिस्टॉक्स (0.5 प्रतिशत) का छिड़काव करें। फलों को तुड़ाई-पूर्व गिरने से रोकने हेतु 20 पी.पी.एम. नेफ्थेलीन एसिटिक अम्ल (2 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी में) का छिड़काव अगस्त में करें।

अबकी बारी, नाशपाती, आड़ू, खुबानी व आलूबुखारा को करो बाजार भेजने की तैयारी

नाशपाती के बीजू पौधों पर भेंट कलम जुलाई में चढ़ानी चाहिए। इसी माह आड़ू, खुबानी और आलूबुखारा आदि के

आड़ू में भूरा सड़न रोग

फलों को तोड़कर बाजार भेजने की व्यवस्था करें। कज्जली धब्बों की रोकथाम के लिए नाशपाती एवं अन्य फलों में डाइथेन जेड-78 (0.2 प्रतिशत) का छिड़काव करें। आड़ू, खुबानी व आलूबुखारा में भूरा सड़न रोग की रोकथाम के लिए बाविस्टिन (0.2 प्रतिशत) का छिड़काव करें। अगस्त में नाशपाती के फलों को तोड़कर भेजने की व्यवस्था करें एवं फल सड़न रोग की रोकथाम के लिए ब्लिटॉक्स (0.2 प्रतिशत) के घोल का छिड़काव करें। ■

परिषद की पत्रिकाओं की सदस्यता व नवीनीकरण हेतु फॉर्म

प्रिय ग्राहकों

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा प्रकाशित विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं की सदस्यता प्राप्त करने हेतु अनुरोध है कि आप पत्रिकाओं का वार्षिक सदस्यता शुल्क 'व्यवसाय प्रबंधक, भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद, नई दिल्ली' के नाम देय बैंक ड्राफ्ट या NEFT द्वारा भेजने की व्यवस्था करें। इस प्रकार आपको पत्रिकाएं सुचारू रूप से मिलती रहेंगी और आप कृषि, बागवानी, पशुपालन, मछली पालन व अन्य सम्बद्ध क्षेत्रों में किये जा रहे अनुसंधान कार्यो से विकसित उन्नत तकनीकों को अपनाकर अधिक से अधिक लाभ प्राप्त कर अपनी आय दोगुनी कर सकेंगे। परिषद की विभिन्न चयनित पत्रिकाओं के लिए नीचे दिए गए बॉक्स में चिन्ह (✓) लगाएं। पत्रिकाओं का वार्षिक सदस्यता निम्न है:-

पत्रिकाओं का नाम	वार्षिक शुल्क
खेती (मासिक)	रु. 300 ☐
फल फूल (द्विमासिक)	रु. 150 ☐
इंडियन फार्मिंग (अंग्रेजी मासिक)	रु. 300 ☐
इंडियन हॉर्टिकल्चर (अंग्रेजी द्विमासिक)	रु. 150 ☐

रिसर्च जर्नल	व्यक्तिगत	संस्थागत
इंडियन जर्नल ऑफ एग्रीकल्चरल साइंसेज (अंग्रेजी मासिक)	रु. 1000 ☐	रु. 3000 ☐
इंडियन जर्नल ऑफ एनिमल साइंसेज (अंग्रेजी मासिक)	रु. 1000 ☐	रु. 3000 ☐

उपरोक्त चिन्हित (✓) पत्रिकाओं। रिसर्च जर्नल की अग्रिम धन राशि रुपये .... का एन.ई.एफ.टी./आर.टी.जी.एस. या बैंक ड्राफ्ट संख्या न. ....दिनांक...........................बैंक का नाम एवं कोड...भेज रहें हैं, कृपया स्वीकार करें ।

नाम...

पूरा पता...

....

पिन कोड..................................फोन न. अथवा मोबाइल न. ....ई-मेल..

प्रकाशन मंगवाने की नियमावली

1. कृपया अपने ऑर्डर के साथ अपना नाम, पता, डाकघर आदि का पूर्ण विवरण, पिन कोड नंबर के साथ अवश्य लिखें।
2. भुगतान ''व्यवसाय प्रबंधक, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली'' के नाम बैंक ड्राफ्ट द्वारा भेजें।
3. आरटीजीएस (RTGS) तथा एनईएफटी (NEFT) द्वारा ऑनलाइन अग्रिम भुगतान के लिए निम्नलिखित जानकारी देखें:-

	पुस्तकों के लिए	पत्रिकाओं और जर्नल के लिए
संस्था का नाम व पता	DKMA Revolving Fund Scheme	परियोजना निदेशक (DKMA)
बैंक का नाम	सिंडिकेंट बैंक (केनरा बैंक)	सिंडिकेंट बैंक (केनरा बैंक)
बैंक का पता	कृषि अनुसंधान भवन-1, पूसा, नई दिल्ली-110012	कृषि अनुसंधान भवन-1, पूसा, नई दिल्ली-110012
आईएफएससी कोड	SYNB0002413	SYNB0002413
एमआईसीआर संख्या	110025166	110025166
चालू खाता संख्या	24131010000043	24133050000040

PFMS Unique Code : DLND00001925 भारत सरकार एवं परिषद के संस्थानों के लिये।

नोट: कृपया एनईएफटी/आरटीजीएस से अग्रिम राशि भेजने के पश्चात हमें पत्र अथवा ई-मेल businessuniticar@gmail.com द्वारा अपने नाम व पते के साथ अपनी मांगी गई पुस्तकों, पत्रिकाओं एवं जर्नल के नाम और अवधि NEFT/RTGS नम्बर, राशि एवं बैंक का नाम इत्यादि सूचित करना आवश्यक है।

संपर्क सूत्र

प्रभारी, व्यवसाय एकक, कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

कृषि अनुसंधान भवन-1, पूसा, नई दिल्ली-110012

दूरभाष: 91-11-25843657 (D) 25841993 (Extn. 657 & 220)

ई-मेल: businessuniticar@gmail.com

वेबसाइट: www.icar.org.in

राष्ट्रीय नर्सरी पोर्टल का शुभारंभ

बागवानी के माध्यम से बड़े उद्यमी बनकर युवा जीडीपी में योगदान दे सकें, इसी को ध्यान में रखकर पिछले दिनों केंद्रीय कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय की तरफ से राष्ट्रीय नर्सरी पोर्टल का शुभारंभ किया गया। अर्थव्यवस्था को गति देने में बागवानी का क्षेत्र संभावित कृषि उद्यम के रूप में तेजी से उभर रहा है। देश की पोषण सुरक्षा, गरीबी उन्मूलन व रोजगार सृजन कार्यक्रमों में इसकी भूमिका महत्वपूर्ण होती जा रही है। बागवानी का क्षेत्र न केवल फसल विविधीकरण के लिए किसानों को विभिन्न प्रकार के विकल्प प्रदान करता है, बल्कि बड़ी संख्या में कृषि उद्योगों को बनाए रखने के लिए प्रचुर अवसर भी सृजित करने में भी मददगार है। कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय द्वारा नर्सरियों के लिए *'ऑनलाइन डिजिटल प्लेटफार्म'* स्थापित किया गया है, ताकि किसान/उत्पादक और अन्य हितधारक अपने आसपास के क्षेत्रों की गुणवत्तायुक्त नर्सरियों की उपलब्धता की जानकारी आसानी से प्राप्त कर सकें। इस पोर्टल के माध्यम से, नर्सरियों के संचालक अपनी प्रोफाइल प्रदर्शित कर बिक्री ऑफर डाल सकेंगे। रोपण सामग्रियों के खरीददार भी सीधे ऑनलाइन पूछताछ कर सकेंगे और अपनी जरूरत के अनुसार मिलते-जुलते बिक्री ऑफर देख पाएंगे। राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड द्वारा विकसित इस नए राष्ट्रीय नर्सरी पोर्टल से खरीददारों को नर्सरियों तक आसानी से पहुंचने में मदद मिलेगी। इसके साथ ही वे रोपण सामग्री की उपलब्धता, कीमत आदि के बारे में जानकारियां प्राप्त कर पाएंगे। इसी तरह नर्सरियों को भी बाजार मांग का पता चलेगा। खरीददारों का नर्सरियों से सीधा संपर्क होने से नर्सरियों को रोपण सामग्रियों का बेहतर दाम मिल पाएगा व अधिक उपज तथा गुणवत्ता बनाए रखने के लिए समय से सलाह प्राप्त कर सकेंगे। उम्मीद की जाती है कि यह पोर्टल नर्सरियों व खरीददारों के बीच की दूरी खत्म करने में मदद करेगा तथ रोपण सामग्री की आसान उपलब्धता सुनिश्चित करने में भी सहयोग करेगा। ■

विदेशियों को भा रहा जर्दालु आम

बिहार के भागलपुर का जर्दालू आम अपने लाजवाब स्वाद की वजह से हमेशा लोगों का पसंदीदा फल रहा है। इस वर्ष पहली बार यह आम विदेश भेजा गया है। जर्दालू आम की पहली खेप जून के पहले सप्ताह में हवाई मार्ग के जरिए लंदन रवाना की गई है। इस बात की जानकारी एपीडा ने अपने ट्विटर हैंडल से साझा की है। जर्दालू आम स्वादिष्ट होने के साथ सेहत के लिए भी खूब फायदेमंद है। इस आम में ज्यादा रेशा पाया जाता है, जो पाचन के लिए बहुत लाभकारी है। यह सुपाच्य होता है और इसमें शुगर की मात्रा भी कम होती है। जर्दालू आम बिहार की एक प्रसिद्ध किस्म है। ऐसा माना जाता है कि इसकी उत्पत्ति बिहार के भागलपुर जिले में हुई थी। भागलपुर एवं समीपवर्ती क्षेत्रों में इसकी बागवानी बड़े पैमाने पर की जाती है। फल की उच्च गुणवत्ता के कारण यह किस्म पड़ोसी राज्यों में भी लोकप्रिय एवं विख्यात है।

जर्दालु आम के पेड़ बड़े एवं इसके छत्रक का फैलाव सामान्य से थोड़ा अधिक होता है। यह एक अगेती किस्म है। वृक्षों में मंजर जनवरी के अंतिम सप्ताह में निकलना शुरू होते हैं एवं 20-25 फरवरी तक निकलते रहते हैं। जून के प्रथम सप्ताह में फल पकने लगते हैं। फल मध्यम आकार से थोड़े बड़े तथा लम्बाकार (साधारणतः 10.6 सें.मी. लम्बे एवं 6.6 सें.मी. चौड़े या मोटे) होते हैं। औसतन एक फल 205-210 ग्राम वजन का होता है। फल का ऊपरी भाग चौड़ा तथा निचला भाग पतला एवं गोलाकार होता है। फल की सतह चिकनी तथा बराबर होती है। छिलका थोड़ा मोटा होता है। फलों का रंग पकने पर पीला-नारंगी होता है तथा गूदे में मनमोहक सुगंध होती है। फल में गूदे की मात्रा लगभग 67 प्रतिशत तक होती है। गूदा मुलायम, रेशारहित और लालिमा लिए पीला होता है। कुल घुलनशील तत्वों की मात्रा 21 प्रतिशत तथा अम्ल की मात्रा 0.23 प्रतिशत होती है। गुठली पतली होती है। छिलका एवं गुठली का वजन फल के वजन का क्रमशः 13.7 एवं 19.5 प्रतिशत होता है। गूदा हल्के लाल रंग का और मीठा होता है। ■

ISSN 0971-2984 पंजी. सं. (क्यू)–437

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की लोकप्रिय मासिक हिंदी पत्रिका

खेती

- निरंतर 73 वर्षों से प्रकाशित आपकी अपनी लोकप्रिय हिंदी मासिक पत्रिका **खेती** में खेती–बाड़ी के आधुनिक तौर–तरीकों, पशुपालन की उन्नत विधियों, कृषि वानिकी, औषधीय पौधों की खेती तथा प्रगतिशील किसानों की सफलता गाथाओं से जुड़े अनुभवी कृषि वैज्ञानिकों के लेखों को अत्यंत सरल भाषा में प्रस्तुत किया जाता है। इस जानकारी का लाभ किसान भाई अपनी कृषि आय बढ़ाने के लिए उठा सकते हैं।
- संपूर्ण रंगीन पृष्ठों से सुसज्जित इस प्रतिष्ठित पत्रिका में **‘अगले माह के कृषि कार्यकलाप’** तथा ‘कृषि खबरें, देश विदेश की’ जैसे अत्यंत उपयोगी नियमित स्तंभ भी हैं जो रोचक होने के साथ नई जानकारियां भी प्रदान करते हैं। यही नहीं विभिन्न किसानोपयोगी विषयों पर पत्रिका के विशेषांकों का भी समय–समय पर प्रकाशन किया जाता है।

पत्रिका मूल्य:

एक प्रति : 30 रुपये, वार्षिक सदस्यता शुल्क : 300 रुपये

संपर्क सूत्र:

प्रभारी, व्यवसाय एकक
कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि अनुसंधान भवन–1, पूसा गेट, नई दिल्ली–110012
दूरभाष : 011–25843657, ईमेल : bmicar@icar.org.in

डा. एस. के. सिंह, परियोजना निदेशक, कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय द्वारा भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के लिए प्रकाशित तथा मैसर्स चन्दु प्रेस, 469, पटपड़गंज इंडस्ट्रियल एस्टेट, दिल्ली 110 092 से मुद्रित। सम्पादक: अशोक सिंह